

ॐ

# भैरव सर्वस्व

॥

संकलनकर्ता  
श्री राधारमण दूर्वार

॥

प्रकाशक  
श्री पीताम्बरापीठ, दत्तिया  
(म. प्र.)



ॐ

# भैरव सर्वस्व

॥

संकलनकर्ता

श्री राधारमण दूर्वार

॥

प्रकाशक

श्री पीताम्बरापीठ, दत्तिया

(म.प्र.)



प्रकाशक  
श्री पीताम्बरा पीठ  
दत्तिया (म. प्र.)

प्रथम संस्करण २००० प्रतियाँ  
संवत् २०४०

द्वितीय संस्करण २००० प्रतियाँ  
संवत् २०५९  
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा  
अगस्त, सन् २००२

मूल्य : रुपये ७५.००

मुद्रक :  
शिवशक्ति प्रेस प्रा. लि.  
बैद्यनाथ भवन, ग्रेट नाग रोड, नागपुर-४४० ००९



## प्रकाशकीय

(द्वितीय नया संस्करण)

श्री भैरव उपासकों को साधना में सहायता हेतु भैरव सर्वस्व का द्वितीय संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। भैरव जी शिव स्वरूप ही हैं। साधना में भैरव जी का स्मरण ध्यान-जप-शाक्त एवं शैव साधना में अंग रूप से किया जाना आवश्यक है। स्वतंत्र रूप से भी भैरव साधना साधकजन करते हैं, और इनसे भी चारों पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं। संकलन कर्ता श्री रूधारमण दूरवार ने भैरव साधकों की सुविधा के लिये भैरव जी से सम्बन्धित अधिकांश विषय इसमें संग्रहित किये हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ में भैरव जी को विविध स्वरूपों में साकार किया है। “मन्त्रद्वयेन भैरवम् भावम् प्रतिपादितवान इति निष्कर्षः” इन अमृतमय शब्दों से भगवान् भैरव के अनुशासनात्मक स्वरूप का श्रुतियों में प्रदर्शन करते हैं। भैरव शब्द का अर्थ उनके बृहद् स्वरूप (भरण, रमण, वमन) सृष्टि, स्थिति, संहार, सामर्थ्य का परिचय दिया है। शिवपुराण में “भैरव पूर्णरूपाम हि शंकरस्य परमात्मनः” वर्णन किया है। अनादि काल से देवताओं की लोकप्रियता में भैरव जी का स्थान मूर्धन्य रूप है।

ग्रन्थ की उपयोगिता और साधकों की रुचि तथा बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रख कर यह नया संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। पीताम्बरा पीठ के लिए यह गौरव की बात है, कि जो ऐसे दुर्लभ ग्रन्थों का निर्माण कर साधकों को लाभान्वित करने का प्रयास रखते हैं। आशा है साधक बन्धु इससे अवश्य लाभान्वित होंगे।

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा  
संवत् २०५८

पीताम्बरा पीठ न्यासमण्डल  
दतिया (म.प्र.)



## प्रकाशकीय

(प्रथम संस्करण)

साधना मार्ग में भगवान् भैरव का महत्त्व सर्वविदित ही है। भैरव जी भक्तों पर अनुग्रह करने वाले एवं साधना मार्ग के विघ्नों को दूर करने वाले देवता है। इनकी साधना से सभी कुछ प्राप्त किया जा सकता है। भैरव जी से सम्बन्धित विशाल साहित्य है। इनके सम्बन्ध में यत्र-तत्र ग्रन्थों में बहुत साहित्य उपलब्ध होता है। भैरव जी से सम्बन्धित स्वतन्त्र संग्रह ग्रन्थ भी उपलब्ध होते हैं, परन्तु इस दिशा में एक ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता प्रतीत हो रही थी जिसमें उनकी साधना से सम्बन्धित सभी सामग्री प्राप्त की जा सके।

प्रस्तुत ग्रन्थ में भैरव जी से सम्बन्धित विषयों का संकलन किया गया है। ग्रन्थ में सभी सामग्री साधना मार्ग के प्रामाणिक ग्रन्थों से एकत्रित की गई है। अपनी ओर से कुछ भी नहीं जोड़ा गया है। संकलन कर्ता श्री राधारमण दूर्वार आश्रम के ही साधक है। इन्होंने परिश्रम पूर्वक अपने कर्तव्य का निर्वाह किया है, तदर्थ मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

आशा है इस ग्रन्थ से सभी साधक लाभान्वित होंगे।

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा

संवत् २०४०

पीताम्बरा पीठ न्यासमण्डल

दतिया (म.प्र.)



## विषयानुक्रमणिका

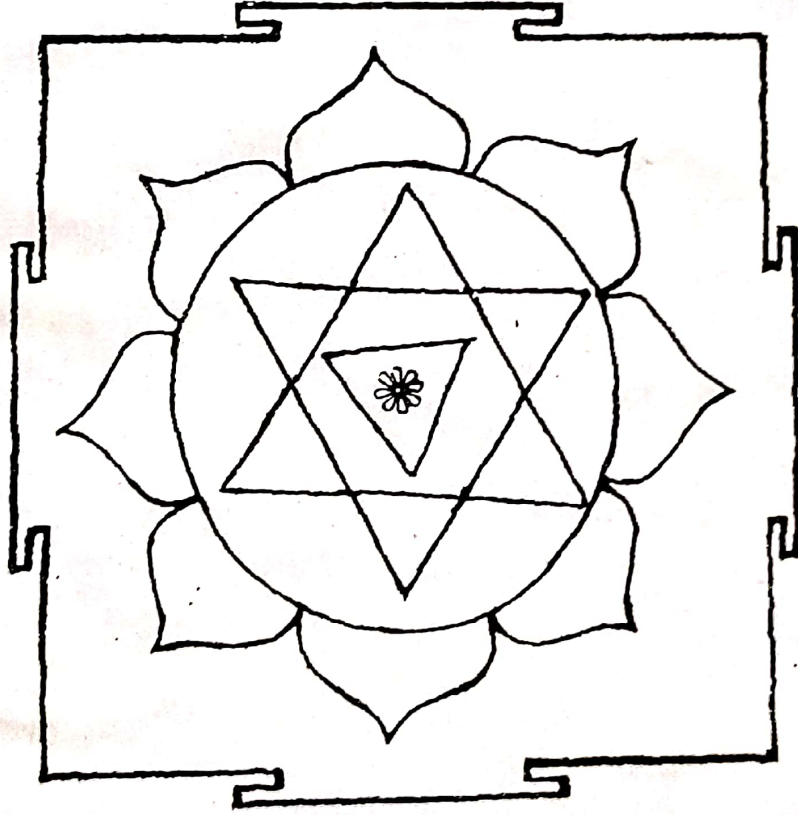
| क्र. | विषय  | पृष्ठ संख्या |
|------|---|--------------|
|      | उपोद्घात  | (१-१२)       |
|      | श्री कालभैरवोत्पत्ति वर्णनम्                              | (१३-१६)      |
|      | प्रकाशकीय, अनुक्रमणिका                                    |              |
| १.   | श्री बटुक भैरव स्तवराजः                                   | १-१३         |
| २.   | श्री बटुक भैरव कवचम्                                      | १४-२३        |
|      | (श्री बटुक भैरव ब्रह्म कवचम्, श्री बटुक भैरव पञ्जर कवचम्) |              |
| ३.   | श्री बटुक भैरव अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रम्                   | २४-२७        |
|      | (काल संकर्षण तन्त्रोक्त)                                  |              |
| ४.   | श्रीमदापदुद्धारक बटुकभैरवस्तोत्रम् (अर्थसहितम्)           | २८-३९        |
| ५.   | श्री बटुक भैरव दीपदान प्रयोगः                             | ४०-५४        |
| ६.   | वीरसाधन प्रयोगः   | ५५-६०        |
| ७.   | प्रयोगानुष्ठान - विधिः                                    | ६१-७४        |
|      | (षट्कर्म प्रयोग विधि, पुरश्चरण प्रयोगः)                   |              |
| ८.   | साबर मन्त्र प्रयोगः                                       | ७५-७६        |
| ९.   | श्री बटुक भैरव मन्त्र जप विधिः                            | ७७-७८        |
| १०.  | क्रियोड्डीश तन्त्रोक्त बटुक भैरव प्रयोगः                  | ७९-८८        |
|      | (सिद्ध भैरव, तुम्बरु भैरव, स्वर्णाकर्षण भैरव)             |              |
| ११.  | श्री बटुक शापविमोचन                                       | ८९-९१        |
| १२.  | अपराध क्षमापन स्तोत्रम्                                   | ९२-९३        |
| १३.  | श्री बटुक भैरव अष्टोत्तरशत नामावलिः                       | ९४-९६        |
| १४.  | श्री बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्रम्                         | ९७-१०७       |
| १५.  | श्री बटुक भैरव बकारादि सहस्रनाम स्तोत्रम्                 | १०८-१२       |
|      | (भैरवयामलोक्तम्)  |              |



| क्र. | विषय  | पृष्ठ संख्या |
|------|---|--------------|
| १६.  | श्री बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्रम् (भैरव तन्त्रोक्तम्)...  | १२८-१३९      |
| १७.  | श्री बटुक भैरव सहस्रनाम स्तोत्रम् (रुद्रयामलोक्तम्)...  | १४०-१५७      |
| १८.  | श्री बटुक भैरव पद्धति: ...  | १५८-२१६      |
|      | (श्री बटुक प्रातःस्मरणम्, पूजाविधिः, भूतशुद्धिः प्राणप्रतिष्ठा,<br>अन्तर्मातृकान्यासः, बहिर्मातृकान्यासः, पीठन्यास, साम्बुकल-श<br>स्थापनम्, सुधाकुंभस्थापनविधिः, द्रव्यशुद्धिः, पीठावरण-<br>देवतान्यासः, पीठ पूजा, आवरण पूजा क्षमापन) |              |
| १९.  | मुद्रा प्रकरणम् ...   | २१७-२१९      |
| २०.  | भूतप्रेत निवारण प्रयोगः ...   | २२०-२२४      |
| २१.  | अथ बटुकोपनिषदम् व्याख्यास्याम्: ...   | २२५-२२८      |
| २२.  | श्री कालभैरवाष्टकम् ...   | २२९-२३०      |
| २३.  | श्री महाकाल भैरव कवचम् ...  | २३१-२३३      |
| २४.  | श्री महाकाल भैरव स्तोत्रम् ...  | २३४-२३५      |
| २५.  | श्री महाकाल स्तोत्रम् ...   | २३५          |
| २६.  | कालभैरवाष्टकम् ...  | २३६-२३७      |
| २७.  | महाकाल भैरव मन्त्रः ...   | २३८          |
| २८.  | मञ्जुघोष मन्त्रः ...  | २३९-२४३      |
| २९.  | अथ कालभैरव-बटुकभैरवयोगः ...   | २४४-२४८      |
| ३०.  | सिद्ध साबर मन्त्रः ...  | २४८          |
| ३१.  | भैरवजी की आरती ...  | २४९          |
| ३२.  | पीताम्बरा पीठ ग्रन्थ सूची ...   | २५१-२५२      |



श्री बटुकभैरव यन्त्रम्







ब्रह्मलीन

श्री पीताम्बरा पीठाधीश्वर राष्ट्रगुरु परमपूज्य श्री १००८ श्री स्वामी जी  
महाराज, वनखण्डेश्वर, दतिया (म०प्र०)



## उपोद्घात

भीरुणामभयप्रदो भवभयाक्रन्दस्य हेतुस्ततो

हृद्वाग्निं प्रथितस्य भीरवरुचामीशोऽन्तस्यान्तकः

भीरं वार्यति यः स्वयोगिनिवहस्तस्य प्रभुर्भैरवो

विश्वस्मिन् भरणादिकृद्रिजयते विज्ञानरूपः परः॥

जो भीरुजनों को अभय देनेवाले तथा भवभय को मिटाने में हेतुभूत हैं, हम उपासकों के हृदय में जिनका निवास सर्वजन विदित है। जिनके शब्द और अङ्ककान्ति भयजनक है। उन भूतगणों के जो स्वामी हैं, जो काल के भी महाकाल हैं तथा कष्ट में पड़े हुये अपने उपासक योगियों के समुदाय की जो शीघ्र रक्षा करने में समर्थ हैं वे विज्ञान स्वरूप भैरव प्राणियों के भरण-पोषण आदि कर्म करते हुए विश्व में सर्वत्र विजयी हो रहे हैं।

विश्व के विकास का उद्गम स्थान है सकल ब्रह्म। उसकी यह स्थिति सृष्टि रचना विषयक संकल्प के समय होती है। इससे पूर्व वह निराकार परमात्मा कहलाता है। यह मन और वाणी से परे है। वैखरी वाणी द्वारा लक्षित जो परा वाक है तथा जिसे श्रुति ने सत्-चित्-आनन्द - इन तीन शब्दों द्वारा जिसके रूप की ओर संकेत मात्र किया है वही यह निष्कल ब्रह्म (निराकार) है उसी का शुद्ध प्रकाश परा संवित् पूर्णहन्ता तथा चित् आदि शब्दों द्वारा अभिहित किया गया है, वेदों में उसी का नाम 'रुद्र' है तथा तन्त्र शास्त्रों में वही 'भैरव' नाम से वर्णित हुआ है।

भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्यः।

भयादिद्रश्च वायश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः॥

इसी के भय से अग्नि एवं सूर्य तपते हैं, इसी के भय से इन्द्र, वायु एवं पाँचवें मृत्यु देवता अपने अपने काम में तत्पर हैं।

“यत् अरुजत् तत् रुद्रस्य रुद्रत्वन्” (काठक शाखा) व्याधियों के उत्पादक होने से रुद्र की रुद्रता है।

“रोरुप्यमाणो द्रवति इति रुद्रः” (यास्क और देवराज) रुदन करते हुए दौडना रुद्र की रुद्रता है।

“रोधनात् द्रावणात् रुद्रः” (तन्त्रलोक) पदार्थों को स्थूलावस्था से तरल करना ही रुद्र की रुद्रता है।

“रोदयति इति रुद्रः” अर्थपति होने से अर्थासक्त प्राणियों को रूलाने वाला रुद्र है।

यजुर्वेद की कठ संहिता में “अग्निर्वै रुद्रः” अग्नि ही रुद्र है। शुक्ल यजुर्वेद की काण्व शाखा ने “देवानां या घोराः तन्वः ताः रुद्रः” देवताओं के घोर शरीरों को रुद्र शब्द से अविहित किया है। तन्त्र के मत से क्रिया शक्ती ही रुद्र है अर्थात् जो तत्त्व पदार्थ मात्र में स्पन्दनशील, क्षोभशील (रोषरूप), द्रवणशील, गतिरूप, क्रूर (घोर) व्याधिमूल, कठिन पदार्थों का द्रावक, ध्वनिशील होकर दौडने वाला, रूलाने वाला तथा सदा द्रुत अवस्था में उपलब्ध है वही रुद्रतत्त्व है। यह तत्त्व अन्तरिक्ष में अभिव्यक्त होकर विश्व में फैला हुआ है इत्यादि श्रुतियाँ जिस महा भयंकर वेद पुरुष का वर्णन करती हैं वही तन्त्रों में ‘भैरव’ के नाम से वर्णित है। इसी वेद पुरुष का वर्णन ‘रौद्र’ तथा ‘सौम्य’ दोनों रूपों में वेदों तथा तन्त्रों में उपलब्ध है।

‘प्राण वाव रुद्रः’ इस वैदिक प्रमाण के अनुसार अध्यात्म में मुख्य प्राणात्मक एवं आधिदैवत में सूर्यात्मक एक रुद्र है। प्राण अपान आदि भेद भिन्न अनेक प्राण एवं सूर्य की अनेक रश्मियाँ अनेक रुद्र हैं। रुद्रों का कार्य ही कठिन द्रव्यों को तरल बनाकर पदार्थों की रक्षा करना है, रुद्रगण नील लोहित है। फिर भी शोचिष केश होने से शुक्लवर्ण है। रुद्र वायु चतुष्कर्मा होने से चतुर्भुज है रुद्रों के वर्ण रक्त पीत हरित आदि हैं। पदार्थों में विद्यमान संचरण ही रुद्रों का कार्य है। रुद्रों का आयुध त्रिशूल है। रुद्रों के लिये ‘ज्वलन्तः वर्षन्तः द्योतमानाः’ आदि अनेक विशेषण मिलते हैं जो रुद्रों के कार्यों के निर्देशक है। पृथ्वी में विद्यमान ‘अङ्गिराग्नि’ रुद्र है अङ्गिराग्नि के पुत्र रुद्रगण है, रुद्रगणों के पुत्र मरुद्गण है। रजोगुण (रक्तवर्ण) तमोगुण (कृष्णवर्ण) इन दोनों का समन्वित वर्ण नील लोहित होने से ये नील लोहित कहलाते हैं। वेदों ने रुद्र गणों का वर्ण धूम्र भी माना है जो उच्चाटन एवं मारण का सूचक है।

रुद्रगण संख्या में ११ है ‘काठक संहिता’ रुद्रों की संख्या १० मानती है प्रतिवस्तु की रक्षा के लिये १०-१० रुद्र प्रति दिशाओं में रहते हैं जैसा कि ‘तेभ्यो



दश प्राचीर्दश दक्षिणा दशप्रतीचीर्दशोर्ध्वा:-' इस कपिष्टल संहिता के वाक्य से रुद्रों की संख्या १०० हो जाती है इसका वर्णन करने के कारण ग्रन्थ का नाम भी 'शतरुद्री' हो गया है। जिस दिशा के रुद्र निर्बल पड़ जाते हैं उसी स्थल से वस्तुयें सड़ने लगती है। स्कन्द पुराण का आवेदन है कि रुद्र बोधनात्मक (ज्ञान रूप) है जिसके अविकाश में वस्तु जड़ कही जाती है स्पन्द ही जड़ चेतन का विभाजक है रुद्र स्पन्दात्मक है।

जिस प्रकार वेदों में वर्णन है उसी प्रकार आगम में भी 'शान्तः शान्तजन प्रियः, प्रशान्तः शान्तिदः शंकरो विष्णुः', इत्यादि सौम्यरूप के बोधक नाम दृष्टिगोचर होते हैं। श्री बटुक भैरव - अष्टोत्तरशत नाम में भैरव का नाम 'विष्णु' है पाञ्चरात्र में भगवान विष्णु का नाम 'भैरव' भी है।

रुद्राष्टाध्यायी में 'नमो दुन्दुभ्याय' पद आता है। बृहस्पति के साठ सम्बत्सर चक्र के अन्तर्गत ५६ वे सम्बत्सर का नाम 'दुन्दुभि' है जिसके अभिमानी देवता 'भैरव' है इनको विष्णु स्वरूप ही माना जाता है।

वेदों में परमात्मा के रौद्ररूप के लिये जो रुद्राष्टाध्यायी में 'कालाय नमः' पद आया है, तन्त्रों में वही 'कालः कपालमाली' तथा गीता में "कालोऽस्मि" के रूप में बतलाया गया है। 'अस्मि' पद में जो पूर्णहन्ता है वही भैरव है।

"अहमात्मा गुडाकेश, अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च" इत्यादि वाक्य कालभैरव के ही द्योतक है।

"भैरव पूर्णरूपां हि शंकरस्य परात्मनः" (शिवपुराण) भैरव शंकर का ही पूर्ण रूप है।

### भैरव शब्दार्थ

'भ' 'र' 'व' इन तीन अक्षरों से भैरव शब्द बना है। अक्षर - 'न क्षरतीत्यक्षरम्' जिसका नाश न हो वह अक्षर है।

श्री अमृतानन्द नाथ ने योगिनी हृदय में इन तीन अक्षरों से भैरव शब्द की निरुक्त इस प्रकार की है -

विश्वस्य भरणाद् रमणाद् वमनात् सृष्टि स्थिति संहारकारी परशिवः।

श्री तत्त्वनिधि तथा अन्य तन्त्रग्रन्थों में इन तीन अक्षरों का ध्यान इस प्रकार है जिसका वर्णन आगे किया है -

भ - तडित्प्रभां महादेवीं नागकङ्कणशोभिताम्।

चतुर्वर्गप्रदां देवीं साधकाभीष्टसिद्धिदाम्॥

विद्युत के समान ज्योति युक्त नाग और कङ्कण लिये हुये धर्म अर्थ काम मोक्ष चारों को तथा साधकों की समस्त इच्छाओं की पूर्ति करने वाली।

र - ललज्जिह्वां महादेवीं (महारौद्रीं) रक्तास्यां रक्तलोचनाम्।

रक्तवर्णामृगभुजां रक्तपुष्पोपशोभिताम्॥

रक्तमाल्यांबरधरां रक्तालङ्कारभूषिताम्।

महामोक्षप्रदां विद्यां अष्टसिद्धिप्रदायिकाम्॥

अति भयङ्कर जिह्वा लपलपाती हुई, रक्त पुष्पों से शोभित, लाल वस्त्र धारण किये हुए, रक्त ही आभूषण पहिने हुए जो विद्या है वह अष्टसिद्धि तथा महामोक्ष को देने वाली है।

व - कुन्दपुष्पप्रभां देवीं द्विभुजां पङ्कजेष्वनाम्।

शुक्लमाल्याम्बरधरां रत्नहारोज्ज्वलां पराम्।

साधकाभीष्टदां सिद्धां सिद्धिदां सिद्धसेविताम्॥

कुन्दपुष्प के समान प्रभायुक्त द्विहस्ता कमलपर आरुढ श्वेत माला एवं वस्त्र धारण किये, रत्नों का उज्ज्वल हार धारण किये, सिद्धों द्वारा पूजित साधकों को अभीष्टप्रद तथा सिद्धि देने वाली शक्ति।

१) “विमेति क्लेशो यस्मादिति भैरवः” जिससे विपत्तियाँ भयभीत होती हैं वही भैरव है।

२) “भैरवः सर्वशक्तिभरितः” सर्वशक्ति - इच्छा, ज्ञान, क्रिया एवं वामा, ज्येष्ठा, रौद्री ये तन्त्रवर्णित शक्तियाँ गृहीत होती हैं।

विज्ञान भैरव में - भैर्भोमादिभिः (साधनैः) अवति इति - भैरवः। भीमादि साधन से रक्षा करने वाला भैरव है।

### भैरव के विविध रूप

तन्त्रों में श्री भैरव के ‘निष्कल’ एवं ‘सकल’ दोनों ही रूपों का वर्णन है। ‘निष्कल’ रूप वाङ्मनसागोचर, विश्वातीत, स्वप्रकाश सर्वत्र आभासशील सर्वभरिताकार सर्वव्यापकसत्ता पूर्णाहंभाव ही है। यह पूर्णहन्ता ही परभैरवता है, जिसमें प्रवेश करके साधकजन ‘अहं ब्रह्मास्मि’ इस महावाक्य का मनन



करने के योग्य होते हैं।

येन येन हि रूपेण साधकः संस्मरेत् सदा।

तस्य तन्मयतां याति चिन्तामणिरिवेश्वरः॥

साधक जिस जिस रूप से अपने इष्टदेवता का स्मरण करता है, अकारणरूप परमात्मा चिन्तामणि की तरह उसके लिये उसी स्वरूप को धारण कर लेते हैं।

तन्त्रों में अष्ट भैरव प्रसिद्ध हैं जिनकी अपनी अपनी शक्तियाँ हैं जिनके साथ ही उनकी पूजा होती है।

| भैरव        | शक्ति       | भैरव       | शक्ति        |
|-------------|-------------|------------|--------------|
| १) असिताङ्ग | - ब्राह्मी  | ५) उन्मत्त | - वाराही     |
| २) रुरु     | - माहेश्वरी | ६) कपाल    | - इन्द्राणी  |
| ३) चण्ड     | - कौमारी    | ७) भीषण    | - चामुण्डा   |
| ४) क्रोध    | - वैष्णवी   | ८) संहार   | - महालक्ष्मी |

श्री शंकराचार्यजी ने प्रपञ्चसार तन्त्र में अष्ट भैरवों के नाम इस प्रकार लिखे हैं - १) भीषण, २) कालराज, ३) संहार, ४) रुरु, ५) उन्मत्त, ६) क्रोध, ७) चण्डकपाल, ८) भूतनाथ।

सप्त विंशति रहस्यम् में निम्नलिखित भैरवों के मन्त्र हैं -

१) श्री मन्थान भैरव, २) फट्कार भैरव, ३) षट्चक्र भैरव, ४) एकात्म भैरव, ५) हविर्भक्ष्य भैरव, ६) चण्ड भैरव, ७) भ्रमर भास्कर भैरव।

इसी ग्रन्थ में दस वीर भैरवों का भी मन्त्र सहित उल्लेख किया गया है - १) सृष्टिवीर भैरव, २) स्थिति वीर भैरव, ३) संहार वीर भैरव, ४) रक्त वीर भैरव, ५) यमवीर भैरव, ६) मृत्युवीर भैरव, ७) भद्रवीर भैरव, ८) परमार्कवीर भैरव, ९) मार्तण्डवीर भैरव, १०) कालाग्निरुद्रवीर भैरव।

उक्त ग्रन्थ में ही तीन बटुक भैरवों के नाम तथा मन्त्र हैं।

१) स्कन्द बटुक, २) चित्र बटुक, ३) विरञ्चि बटुक।

तन्त्र चिन्तामणि में मार्तण्ड भैरव की उत्पत्ति कथा है कि मल्लि नामक राक्षस को मारने के लिये भगवान् शंकर ने जो मल्लारि रूप धारण किया था वही मार्तण्ड भैरव के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ललिता स्तवरत्न में इनका निम्न

ध्यान दिया गया है।

चक्षुष्मति प्रकाशन शक्ति समारचितकेलिम्।

माणिक्यमुकुट रम्यं वन्दे मार्त्तण्ड भैरवं हृदये॥

चक्षुष्मानों में पदार्थावलोकन शक्तिप्रदान के द्वारा क्रीडा करने वाले माणिक्यमय मुकुट से शोभित मार्त्तण्ड रूप भैरव की मैं हृदय से वन्दना करता हूँ।

रुद्रयामल तन्त्र में ६४ भैरवों के नामों का उल्लेख किया गया है।

१) असिताङ्ग, २) विशालाक्ष, ३) मार्त्तण्ड, ४) मोदकप्रिय, ५) स्वच्छन्द, ६) विघ्न सन्तुष्ट, ७) खेचर, ८) सचराचर, ९) रुद्र, १०) कोडदंष्ट्र, ११) जटाधर, १२) विश्वरूप, १३) विरूपाक्ष, १४) नानारूपधर, १५) पर, १६) वज्रहस्त, १७) महाकाय, १८) चण्ड, १९) प्रलयान्तक, २०) भूमिकम्प, २१) नीलकण्ठ, २२) विष्णु, २३) कुलपालक, २४) मुण्डपाल, २५) कामपाल, २६) क्रोध, २७) पिङ्गलेक्षण, २८) अभ्ररूप, २९) धरापाल, ३०) कुटिल, ३१) मन्त्र नायक, ३२) रुद्र, ३३) पितामह, ३४) उन्मत्त, ३५) बटुनायक, ३६) शंकर, ३७) भूतवेताल, ३८) त्रिनेत्र, ३९) त्रिपुरान्तक, ४०) वरद, ४१) पर्वतावास, ४२) कपाल, ४३) शशिभूषण, ४४) हस्तिचर्माम्बरधर, ४५) योगीश, ४६) ब्रह्मराक्षस, ४७) सर्वज्ञ, ४८) सर्व देवेश, ४९) सर्वभूतहृदिस्थिता, ५०) भीषण, ५१) भयहर, ५२) सर्वज्ञ, ५३) कालाग्नि, ५४) महारौद्र, ५५) दक्षिण, ५६) मुखर, ५७) अस्थिर, ५८) संहार, ५९) अतिरिक्ताङ्ग, ६०) कालाग्नि, ६१) प्रियंकर, ६२) घोरनाद, ६३) विशालाक्ष, ६४) दक्ष संस्थित योगीश।

इसी प्रकार आगम रहस्य में दस बटुकों का भी निम्न उल्लेख है।

अद्याद्यो हेतुबटुको द्वितीयो बटुक स्मृतः।

त्रिपुरान्तक बटुकस्तृतीयः परिकीर्तितः॥५५४॥

वह्निवेताल बटुकश्चतुर्थः कीर्तितः शिवे।

अथाग्निजिह्वबटुक पञ्चमः परिकीर्तितः॥५५५॥

श्रीकालबटुकस्तद्वत् करालबटुकस्तथा।

तथैकपाद बटुकः श्री भीमबटुकस्तथा॥५५६॥

त्रैलोक्य बटुकश्चैव श्री सिद्धबटुकस्तथा।

दश वै बटुका ख्याताः सर्व सिद्धि प्रदायकाः॥५५७॥



शक्ति सङ्गम तन्त्र के छिन्नमस्ता खण्ड में - 'अक्षोभ्यो भैरवः प्रोक्तः, अक्षोभ्यं नाम चाश्रित्य मुनिवेषधरः शिवः' का उल्लेख है जिसमें भैरव को शिव ही माना गया है।

'विद्याश्चैताः पुरुषं ( भैरवं ) विना न सिद्ध्यन्ति' के अनुसार महाविद्याओं की सिद्धि बिना सम्बन्धित भैरव के होना असम्भव है। अतः विद्याओं के भैरवों का उल्लेख निम्नानुसार है -

| विद्या        | भैरव         | विद्या        | भैरव          |
|---------------|--------------|---------------|---------------|
| १) कालिका     | - महाकाल     | २) तारा       | - अक्षोभ्य    |
| ३) सुन्दरी    | - ललितेश्वर  | ४) छिन्नमस्ता | - क्रोध भैरव  |
| ५) भुवनेश्वरी | - महादेव     | ६) धूमावती    | - काल भैरव    |
| ७) महालक्ष्मी | - नारायण     | ८) मातङ्गी    | - मतङ्गसदाशिव |
| ९) बगलामुखी   | - मृत्युञ्जय | १०) भैरवी     | - बटुक        |

#### परा रहस्यानुसार

|            |                     |            |             |
|------------|---------------------|------------|-------------|
| काली       | - महाकाल            | भेडा       | - विरूपाक्ष |
| सुमुखी     | - अमृतेश्वर         | अन्नपूर्णा | - विश्वनाथ  |
| त्रिकूटा   | - कामेश्वर          | राज्ञा     | - भूतेश्वर  |
| छिन्नमस्ता | - कालरुद्र          | दुर्गा     | - नीलकण्ठ   |
| शारदा      | - शिव               | शीला       | - वामदेव    |
| कालरात्री  | - श्री भैरव         | तारा       | - सद्योजात  |
|            | भुवनेश्वरी - ईश्वरी |            |             |

#### उद्घण्ड भैरवानुसार

|          |                     |              |                     |
|----------|---------------------|--------------|---------------------|
| कालिका   | - महाकाल भैरव       | भुवनेश्वरी   | - महेश्वर भैरव      |
| तारिणी   | - अक्षोभ्य भैरव     | कमला         | - नारायण भैरव       |
| त्रिपुरा | - कामेश्वर भैरव     | छिन्नमस्ता   | - कराल भैरव         |
| बगलामुखी | - त्र्यम्बक भैरव    | शिवा (भैरवी) | - कुक्कुटेश्वर भैरव |
| मातङ्गी  | - महेश (मतङ्ग) भैरव | धूमावती      | - अघोर भैरव         |

केवलं यो जपेत् शाक्तं मनुं शैवं तु नो जपेत्।

जन्मकोटिषु जप्तोऽपि न मनुः सिद्धिभाग् भवेत्॥

(परा रहस्य)

जो शक्ति साधक बिना शिव मन्त्र के शक्ति मंत्र का जप करता है उसे कोटि जन्मों तक सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती है और भी कहा गया है -

“शिवं बिना चित्कलायां न क्लात्वं क्वचिद् भवेत्”

शक्तिसङ्गम तन्त्रानुसार -

क्रोध भैरव संयोगाद् यक्षिण्यः सिद्धिदः तथा।

यथा विद्या प्रसिद्ध्यन्ति पुंयोगादेव पार्वति॥

हे पार्वति! जिस प्रकार क्रोध भैरव के संयोग से यक्षिणी शीघ्र सिद्धिदायिनी हो जाती है, उसी प्रकार पुंयोग से ही विद्यायें शीघ्र फलदायिनी हो जाती हैं।

सावर मंत्रों की साधना में भैरव के मन्त्र का जप करना आवश्यक है। बिना भैरव के मन्त्र के सावर मन्त्रों की सिद्धि होना कठिन है। कहा भी गया है -

भैरवस्य तु योगेन सावरं सिद्धिदायकम्।

बटुकस्य तु संयोगाद् विद्यातः सिद्ध्यन्ति नान्यथा॥

(शक्तिसङ्गम तन्त्र)

शारदा तिलक आदि तन्त्र ग्रन्थों में श्री बटुक भैरव के सात्विक, राजस, तामस तीनों ध्यान भिन्न-भिन्न प्रकार से वर्णित हैं। रूप-उपासना भेद से उनका फल भी भिन्न है। सात्विक ध्यान अपमृत्यु नाशक, आयु-आरोग्यप्रद तथा मोक्षप्रद है। धर्म, अर्थ, काम के लिये राजस ध्यान है, कृत्या भूतादि तथा शत्रु के शमन करने के लिये तामस ध्यान किया जाता है।

प्रत्येक तान्त्रिक कर्म के दीपनाथ भैरव का पूजन करना आवश्यक होता है। इनका ध्यान निम्न है -

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम्।

भैरवाय नमस्तुभ्यं अनुज्ञां दातुमर्हसि॥

अत्यन्त तीखे दांत, विशालकाय, महाप्रलयकालाग्नि तुल्य हे भैरव! आपको नमस्कार है, आप मुझे कार्य करने की अनुमति प्रदान करें।

तान्त्रिक पूजन में आनन्द भैरव एवं भैरवी का पूजन करना आवश्यक होता है (विशेषार्घ्य पूजन में) इनका ध्यान आदि पूजा पद्धतियों में वर्णित किया गया है।



तन्त्र साधना में “मञ्जुघोष” की साधना का वर्णन है। ये भैरव के ही स्वरूप माने गये हैं इनकी उपासना से स्मृति की वृद्धि तथा जड़ता का नाश हो जाता है। इनका ध्यान निम्नोक्त है -

अग्रतो बालवृषभं दक्षतस्ताम्रचूडकम्।

वामे बालशृंगालं पश्यन्तं भैरवं भजे॥

सामने बाल वृषभ, दाहिने ताम्रचूड (मुर्गा), बायें बालशृंगाल को देखते हुये भैरव को नमस्कार करता हूँ। अष्टसिद्धि ग्रन्थ में इनके अनेकों प्रयोग वर्णित किये गये हैं जो सद्यः सिद्धिप्रद है। नेत्रतन्त्र के दशमाधिकार में भी भैरव तथा इच्छा शक्ति का विस्तृत ध्यान है -

भैरव रूपः कालः सृजति जगत्कारणादि कीटान्तम्।

इच्छावशेन यस्याः सा त्वं भुवनात्मिके जयसि॥

जिसकी इच्छा शक्ति के आधीन होकर काल भैरव रूप से ब्रह्मा से लेकर कीट पर्यन्त चराचर जगत का सृजन करता है वह तू ही है, हे भुवनात्मिके! आपकी जय हो।

संगीत शास्त्र में भी भैरव एवं भैरवी रागों का अत्यन्त महत्व है। संगीतज्ञों के कथनानुसार भैरवी राग के पश्चात अन्य राग फीके पड़ जाते हैं।

### भैरवोपासना साहित्य

ज्ञानकाण्ड के साहित्य में “शिवसूत्र” सर्वोपरि है। किम्बदन्ती है कि भगवान् शंकर ने श्री वसुगुप्तजी को स्वप्न में आदेश दिया कि महादेव शिखर के नीचे शंकरपाल नामक स्थान पर जाकर तपस्या करो। तपस्या रत होनेपर एक दिन एक विशाल शिलाखण्ड उलट गया उसपर शिवसूत्र लिखे हुए थे। श्री वसुगुप्त को यह भी आदेश हुआ था कि इन सूत्रों के आधार पर शुद्धाद्वैत का प्रचार करो। शिवसूत्र ही भैरवोपासना के मूल स्रोत हैं। इन्हीं शिवसूत्रों में सर्वप्रथम “भैरव” शब्द आया है।

### उद्यमो भैरवः

उक्त सूत्रों पर अनेक विद्वानों ने टीकायें लिखी हैं। ‘स्वच्छन्द’ एवं ‘मालिनी विजयोत्तर तन्त्र’ भैरव एवं भैरवी के सम्वादरूप में हैं। ‘विज्ञान भैरव’ रुद्रयामल तन्त्र का सार है इसमें शुद्धाद्वैत - मत - निर्धारित योग का वर्णन है।

वर्तमान में बटुक भैरव साधना विषयक हस्तलिखित ग्रन्थ अनेकों पुस्तकालयों में संग्रह किये गये हैं जो निम्नानुसार है।

संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के सरस्वती भवन में भैरव विषयक कुछ ग्रन्थ निम्नानुसार है -

बटुक दीपदान २६६८०, बटुक दीपदान प्रकार २४७०८, बटुक दीपदान प्रयोग २५८४९, बटुक दीपदान विधि: २५४१७, २५५२, २६६५०, २४८७०, बटुकन्यास २५९१०, बटुक पटल २४६९६, बटुक पूजन यन्त्रोद्धार २६०५७, बटुक पूजा देवता २५९०६, बटुक पूजा पद्धति बालभट्ट विरचित २५९०७, २५९०८, बटुक भास्कर रमानाथ विरचित ७३९४, बटुक भैरव कल्प २५९१३, बटुक भैरव तन्त्र २५५८०, बटुक भैरव दीपदान विधि २५९१४, २५९१५, बटुक भैरव पंचांग २३९३५, बटुक भैरव पुरश्चरण विधि: २३८३९, बटुक भैरव पूजन विधि २६६६५, बटुक भैरव पुरश्चरण संख्या विचार २५९८२, बटुक भैरव मंत्र प्रयोग २६२७२, बटुक भैरव विधान २६१५१, बटुकस्तव पुरश्चरण प्रयोग २६०७०, बटुकार्चन दीपिका (काशीनाथ भट्ट) २४००७, भैरव दीपदान विधि २५३९६, भैरव दीप विधि २५५९६, भैरव पूजा पद्धति २३८९५।

केटलाग केटलोगोरम में प्रकाशित भैरव ग्रन्थों का विवरण भैरवार्चन १।४१७, भैरवस्तव १।४१७, भैरवार्चा पारिजात १।४१७, भैरव सहस्र नाम १।४१७, भैरव सपर्याविधि १।४१७, भैरव यामल १।४१७, २।९५, ३।९०, भैरव नामावलि १।४१७, भैरव प्रयोग १।४१७, भैरव पद्धति १।४१७, भैरव नाथ तन्त्र १।४१७, भैरव तन्त्र १।४१७, ३।९७।

नेशनल दरबार पुस्तकालय काठमाण्डू (नेपाल) के ग्रन्थ - मन्थान भैरव तन्त्र १।२७९, विज्ञान भैरव २।२४६ बटुकनाथ पद्धति १३८५, वंगीय साहित्य परिषद। बटुक पंचांग प्रयोग पद्धति १९० डेकन कालेज पूना। बटुक भैरव पंचांग ४८५० रघुनाथ मन्दिर पुस्तकालय श्रीनगर। बटुक भैरव पूजा पद्धति ४१३५ राष्ट्रीय पुस्तकालय। बटुक मालामंत्र ६४७९ एशियाटिक सोसायटी कलकत्ता। बटुकार्चन ६४८४ एशियाटिक सोसायटी, बटुकार्चन संग्रह ६४६६ एशियाटिक सोसायटी। इत्यादि।

म. म. पं. श्री. गोपीनाथजी कविराज ने तान्त्रिक साहित्य (विवरणात्मक ग्रन्थ सूची) में बाइस पुस्तकालयों में संग्रहीत हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का



विवरण दिया है, सभी पुस्तकें तन्त्र विषयक हैं। तन्त्र विद्या के अनुशीलनकर्ता अभिलाषियों को उक्त ग्रन्थ अवलोकनीय है।

### साधना परिचय

साधना सफलता की कुंजी है, अभीष्ट सिद्धि के प्रमुख उपाय को साधना कहते हैं। साधना के द्वारा सिद्धि प्राप्त करना प्रत्येक साधक का लक्ष्य है। साधकों के अधिकार भेद से साधना भिन्न-भिन्न रूप से शास्त्र में निर्दिष्ट होती है। ज्ञान योगी शुद्धबुद्धि के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति करते हैं। राजयोगी चित्तवृत्ति के निरोध से समाधि द्वारा अनेक अद्भुत सामर्थ्य प्राप्त करते हैं और मंत्रयोगी मंत्राभ्यास से अपनी अभिलषित सिद्धि प्राप्त करते हैं। मंत्र द्वारा उपास्य देव के समस्त दिव्यगुण क्रिया स्वभाव का परिचय होता है। मन्त्राभ्यास से साधक में उक्त गुण व्यक्त होते हैं। इष्ट के समस्त गुणों के व्यक्त होने पर साधक भी इष्टवत् हो जाता है तभी पूर्णरूप से मन्त्र सिद्ध होता है। यन्त्र में प्राणप्रतिष्ठादि प्रयोगों से मन्त्र सिद्ध देवता का आविर्भाव संकल्पसिद्धि से होता है। संकल्प सिद्धि मन्त्र चैतन्य होने पर ही होती है। वास्तव में संकल्पसिद्धि ही सिद्धि का द्वार है। इसीलिये प्रत्येक कर्म में संकल्प ही शुद्ध रीति से प्रथम उपादेय होता है मन्त्रसिद्धि का सर्वश्रेष्ठ साधन मन्त्र का पुरश्चरण है। तीनों कालों में इष्टदेव का पूजन, मन्त्र, जप, तर्पण, होम और ब्राह्मण भोजन इन पंचांग क्रियाओं का समुच्चय पुरश्चरण कहलाता है। भगवान् बटुक के मन्त्र की पुरश्चरण संख्या इक्कीस लाख है। सम्प्रदायानुसार पहिले साधक को श्री गुरु से बटुक मन्त्र का उपदेश ग्रहण कर विधान से पुरश्चरण करना चाहिये। इक्कीस अक्षर मन्त्र साधन ही प्रधान है। रात्रि को साधन करना शीघ्र सिद्धिप्रद होता है। ज्येष्ठ शुक्ल दशमी बटुक मन्त्र सिद्धि का श्रेष्ठ काल है इसके अतिरिक्त भिन्न भिन्न महीनों में नक्षत्र वार आदि युक्त कुछ विशेष रात्रियाँ आती हैं जिनमें किया हुआ जप सिद्धि प्रदान करता है जैसे भाद्रपद की कृष्णाष्टमी, दीपावली, काल भैरवाष्टमी, शिवरात्रि, क्रोधरात्रि, वीररात्रि आदि रात्रियों में पुरश्चरण के ही समान मन्त्रजप सिद्धिप्रद है। संक्रान्ति काल में भी जप प्रभावशील होता है इसलिये धैर्यपूर्वक उक्त रीतियों का अनुष्ठान साधकों को करना चाहिये।

श्री बटुक के पटल में भगवान् शंकर ने कहा कि हे पार्वती! मैंने प्राणियों को सभी प्रकार के सुख देने वाला बटुक रूप धारण किया है। अन्य देवता तो देर से कृपा करते हैं, किन्तु भैरव शीघ्र ही अपने साधक की सभी मनोकामनायें

पूर्ण करते हैं। उदाहरणार्थ भैरव का वाहन कुत्ता अपनी स्वामिभक्ति के लिये प्रसिद्ध है। अनेकों सत्य कथायें हैं कि कुत्ते ने अपनी जान की बाजी लगा कर अपने स्वामी की रक्षा की। जब एक सामान्य जीव अपने स्वामी का इतना वफादार है फिर उसका स्वामी (भैरव) अपने साधक के कितने अधिक रक्षक होंगे। स्वयं सिद्ध है कि वह साधक की सभी मनोकामनायें पूर्ण कर अपने भक्त की सभी प्रकार की विपत्तियों से रक्षा करते हैं। कहा भी गया है -

मानुषं जन्म चासाद्य दुःखभाजो भवन्ति ये।

ते भजन्तु सदा देवं भैरवं सुखदायकम्॥

तस्माद्दुःख विनाशाय भैरवः सेव्यतां जनैः।

मया दुःख विनाशाय भैरवं रूपमाश्रितं॥

भैरवः सेवितो येन तेनैव सेवितो ह्यहम्।

अहं भैरवरूपेण लोकानां सुखदा सदा॥

तन्त्र एवं पुराणों में भैरव अवतार की कथायें -

शक्ति संगम तंत्र के काली खण्ड में भैरव की उत्पत्ति का वर्णन है - आपद नामक दैत्य ने कठिन तपस्या कर वर प्राप्त किया कि मेरी मृत्यु पांच वर्ष के बालक जो विशेष रूप-तेज व गुणयुक्त हो, के द्वारा हो। पश्चात वह मदोन्मत्त होकर लोकों में उत्पात करने लगा, पीडित देववर्ग ने जब आपत् को मारने हेतु उपाय करने के लिये एकत्र हुये उस समय उन सबके शरीर से एक-एक तेज की धारा निकली और प्रत्येक के सम्मिलित तेज से एक-एक बटुक का आविर्भाव हुआ। जब असंख्य बटुकों के आविर्भाव के पश्चात भी वह तेज धारा आगे बढ़ी तो निश्चित बिन्दु पर एक विशेष बटुक का आविर्भाव हुआ उसी बटुक ने आपत् दैत्य का संहार किया। इसी कारण इन्हें आपदुद्धारक कहा जाता है।

कालिका पुराण में करवीर पुर के राजा चन्द्रशेखर की पत्नी तारावती के गर्भ से महादेव के दो पुत्र उत्पन्न हुये, ये पार्वती के शाप से वानरमुख थे। बड़े का नाम भैरव तथा छोटे का नाम वेताल रखा गया था। इसी प्रकार कूर्म-स्कन्दादि पुराणों में भी भैरव के अवतार का वर्णन मिलता है।

मंत्री

पीताम्बरा पीठ दत्तिया

दत्तिया (म.प्र.)



## श्री कालभैरवोत्पत्ति वर्णनम्

स्कन्ध पुराण के काशीखण्ड के इकतीसवें अध्याय में श्री कालभैरव की उत्पत्ति का वर्णन है।

एक बार मेरु पर्वत पर बैठे हुये ब्रह्मादि देवताओं से ऋषियों ने प्रणाम करके पूछा कि आप सब में श्रेष्ठ कौन है? उस समय ब्रह्माजी अहंकार में आकर बोले कि - सम्पूर्ण सृष्टि को मैं ही उत्पन्न करता हूँ, मुझे किसी ने उत्पन्न नहीं किया है अतः अनादि होने के कारण मैं ही सभी देवताओं में श्रेष्ठ हूँ, मैं ही ईश्वर हूँ। ब्रह्मा के वचन सुनकर नारायण के अंशज ऋतु अत्यंत कुपित होकर बोले - हे ब्रह्मा! तुम अहंकार के वशीभूत होकर ही ऐसी बात कर रहे हो, सम्पूर्ण जगत का कर्त्ता एवं पालक मैं ही तो हूँ, मैं नारायण का अंश हूँ एवं यज्ञस्वरूप भी मैं ही हूँ। मेरी प्रेरणा से ही तुम सृष्टि को उत्पन्न करते हो अतः स्वयं को श्रेष्ठ नहीं कहो। इस प्रकार जब दोनों विवाद करने लगे। अन्त में उन्होंने इस सम्बन्ध में वेदों से निर्णय देने को पूछा कि हे श्रुतियों! आप स्वतः प्रमाण है अतः इस सन्देह का निवारण करें कि हम दोनों में कौन श्रेष्ठ है?

यह सुनकर वेदों ने कहा कि जिनमें सब भूतों का अन्त होता है, जिनसे सब का प्रादुर्भाव होता है, जो समस्त यज्ञों के स्वामी हैं, जो स्वतः प्रमाण हैं, सम्पूर्ण विश्व जिनके भीतर भ्रमण कर रहा है, जिसके प्रकाश से समस्त विश्व प्रकाशमान है वे एकमात्र शंकर ही कैवल्यरूप हैं।

वेदों के इस प्रकार कहने पर माया से मोहित ब्रह्मा एवं ऋतु ने कहा कि जो दिगम्बर, श्मशानवासी, सर्पों के आभूषण धारण किये हैं वे किस प्रकार परब्रह्म हो सकते हैं।

उसी समय सनातन प्रणव ने प्रकट होकर यह कहा - भगवान शंकर स्वयं ज्योति सनातन हैं, पराशक्ति शिवा उनकी शक्ति हैं अतः यह सत्य है कि भगवान शंकर से बड़ा कोई नहीं है।

जब प्रणव द्वारा निर्णय दिये जाने पर भी दोनों का अज्ञान नाश नहीं हुआ उसी समय उन दोनों के मध्य एक ज्योति प्रकट हुई जो पुरुषाकृति में परिणित हो गई। उस ज्योति पुरुष को देखकर ब्रह्मा का पांचवां मस्तक कहने लगा कि हम दोनों के बीच यह कौन आ गया है? क्षण भर में वह पुरुष नील लोहित वर्ण, त्रिशूलपाणि, त्रिनेत्र, नागों के आभूषणों से युक्त, बालरूप परिवर्तित होकर रुदन करने लगा।

उस समय ब्रह्मा ने यह समझकर कि यह बालक मेरे पंचम मस्तक से प्रादुर्भूत हुआ है अतः अज्ञान के वशीभूत होकर इस प्रकार कहने लगे - हे वत्स! तुम मेरे मस्तक से प्रादुर्भूत होकर रुदन कर रहे हो अतः मैं तुम्हारा नाम "रुद्र" रखता हूँ। अब तुम मेरी शरण में रहो, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।

ब्रह्मा के इन गर्व युक्त वचनों को सुनकर यह बालक भैरवाकृति पुरुष के रूप में परिवर्तित हो गया। वह श्यामवर्ण, कालस्वरूप, सम्पूर्ण विश्व का पालन एवं संहार करने की सामर्थ्य रखने वाला था अतः उसका नाम भैरव प्रसिद्ध हुआ।

उस भैरवाकृति को देखकर भी ब्रह्मा का अहंकार दूर नहीं हुआ। वे उस भैरवाकृति ज्योति पुरुष से कहने लगे कि - हे वत्स! सम्पूर्ण जगत का भरण करने का सामर्थ्य रखने के कारण तुम्हारा नाम भैरव होगा, तुमसे काल भी भयभीत होगा, अतः तुम "काल भैरव" के नाम से भी प्रसिद्ध होगे।

ब्रह्मा के इस प्रकार दिये गये वरों को ग्रहण कर उसी समय अपने बायें हाथ की कनिष्ठिका के नख से ब्रह्मा का पांचवां शिर (जिसने शिवजी की निन्दा की थी) काट लिया और कहा - हे ब्रह्मा! आपके पंचम मुण्ड ने शिवजी की निन्दा की थी उसे मैंने काटकर दण्डित कर दिया है।

अपना पांचवा शिर कट जाने पर ब्रह्मा को यथार्थ ज्ञान हुआ कि शिव ही सर्वश्रेष्ठ, सब के आदि कारण स्वरूप परब्रह्म है। तब वे भयभीत होकर शिवजी को प्रसन्न करने हेतु स्तुति करने लगे, स्तुति से प्रसन्न होकर शिव ने उनको अभयदान दिया। तत्पश्चात् अपने ही अंश भैरव को आज्ञा दी कि - हे भैरव! तुम लोक प्रदर्शन हेतु इस कटे हुये ब्रह्मा के मुण्ड को लेकर भिक्षा याचन करते हुये लोक भ्रमण करो और इस प्रकार ब्रह्महत्या के पाप का प्रायश्चित्त करो।

यह कह कर शिव ने "ब्रह्महत्या" नामक एक कन्या को प्रकट किया



जो रक्तवर्ण के वस्त्रों को धारण किये हुये थी, उसका मुख अत्यंत भयानक, तीखे दांत एवं जीभ लपलपा रही थी जो अन्तरिक्ष से टपकते हुये रक्त का पान कर रही थी। उसके हाथों में खप्पर एवं कैची थी, वह भीषण स्वर में गर्जन कर रही थी। तब शिव ने उससे कहा कि हे ब्रह्महत्या! जब तक भैरव काशीपुरी नहीं पहुँचें तबतक तुम उनका पीछा करती रहो। तुम सर्वत्र प्रवेश करने में समर्थ रहोगी केवल काशीपुरी में तुम प्रवेश नहीं कर पाओगी।

तब कपालमुण्डधारी भैरव उस ब्रह्महत्या से मुक्ति पाने हेतु तीनों लोकों का भ्रमण करने लगे, पीछे-पीछे ब्रह्महत्या चल रही थी। इस प्रकार तीनों लोकों एवं तीर्थों का भ्रमण करते हुये परमपवित्र अविभुक्त तीर्थ काशीपुरी पहुँचे। काशी में प्रवेश करते ही ब्रह्महत्या ने उनका पीछा छोड़ दिया, उसी समय भैरव के हाथ से स्वतः ही ब्रह्मा का शिर छूट कर गिर पड़ा। जिस स्थान पर वह शिर गिरा वह स्थान “कपाल मोचन” के नाम से प्रसिद्ध हुआ पश्चात भूतभावन भगवान् शिव ने भैरव को काशीपुरी का कोतवाल नियुक्त किया।

भगवान् कालभैरव का आविर्भाव मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष की अष्टमी को सन्ध्या समय हुआ था जो आगमानुसार घोररात्रि नाम से प्रसिद्ध है।

“काशिकापुराधिनाथ कालभैरवं भजे”

(काल भैरवाष्टक)

— राधारमण दूर्वार

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

## अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

आचम्य प्राणानायम्य -

मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं त्रिलोचनम्।  
शंकरं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम्॥१॥  
सर्वेषां चैव भूतानां हितार्थं वाञ्छितं मया।  
विशेषतस्तु राज्ञां वै शान्तिपुष्टिं प्रदायकम्॥२॥  
अङ्गन्यास करन्यास देहन्यास समन्वितम्।  
वक्तुमर्हसि देवेश मम हर्षं विवर्द्धनम्॥३॥

ईश्वरोवाच -

शृणु देवि महामन्त्र आपदुद्धारहेतुकम्।  
सर्वदुःख प्रशमनं सर्व शत्रु विनाशनम्॥  
अपस्मारादि रोगाणां ज्वरादीनां विशेषतः।  
नाशनं स्मृतिमात्रेण मन्त्रराजमिमं प्रिये॥  
ग्रहराजभयानां च नाशनं सुख वर्द्धनम्।  
स्नेहाद्वक्ष्यामि ते मन्त्रं सर्व सारमिमं प्रिये॥  
सर्वकामार्थदं मन्त्रं राजभोगप्रदं नृणाम्।  
आपदुद्धार मन्त्रस्य मूलविद्यां शृणुप्रिये॥  
यस्य संस्मरणादेव भूतानां नाशनं वरम्।  
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य देवीप्रणवमुद्धरेत्॥  
बटुकायेति वै पश्चादापदुद्धारणाय च।  
कुरु द्वयं ततः पश्चाद्बटुकाय पुनर्वदेत्॥  
देवी प्रणवमुद्धृत्य मन्त्रोद्धारमिमं प्रिये।  
एकविंशतिवर्णास्तु मन्त्रे सत्यं प्रकाशितः॥



यन्त्रोद्धारमिमं देवि त्रैलोक्ये चाति दुर्लभम्।  
 तद्यन्त्रं च प्रवक्ष्यामि यन्त्रे देवं च पूजयेत्॥  
 त्रिकोणं च तथा दत्त्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत्।  
 ततश्च बलये कुर्याच्चतुष्कोणं ततश्चरेत्॥  
 मन्त्रदलं समारभ्य मन्त्राक्षराणि पूरयेत्।  
 उपरितानि सव्येन सर्वाणि पूरयेत्क्रमात्॥  
 उर्वरितदले तत्र लक्ष्मीबीजं न्यसेत्सदा।  
 दिक्पालांश्च सामारोप्य कोणेष्ट भस्वांल्लिखेत्॥  
 एवं यन्त्रम् च सम्पूज्य स्वस्थोभूत्वा जपेन्नरः।  
 मन्त्राक्षराणां संख्याकैस्तन्तुभिर्ब्रह्मसूत्रजैः॥  
 वर्तिर्दत्त्वा घृतेनैव दीपं तन्त्रं प्रदापयेत्॥

दीपदान मंत्रो यथा —

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं श्रीं बं सर्वज्ञाय महाबलपराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं  
 गृहाण सर्वं कार्यार्थं साधकाय सर्वदुष्टान्नाशाय नाशाय त्रासय त्रासय सर्वतः मम  
 रक्षां कुरु कुरु फट् स्वाहा॥

त्रिराचम्य च मन्त्रैश्च हस्तं प्रक्षाल्य वै तदा।  
 हस्ते जलं ततो गृह्य विनियोगं पठेद्ब्रह्मम्॥  
 अप्रकाशयमिमं मन्त्रं सर्वशक्तिं समन्वितम्।  
 स्मरणादेव मन्त्रस्य भूतं प्रेतं पिशाचकाः॥  
 विद्रवंत्यति भीता वै कालरुद्रादिव प्रजाः।  
 पठेद्वा पाठयेद्वापि पूजयेद्वापि पुस्तकम्॥  
 नाग्निं चोरं भयं तत्र ग्रहराजं भयं तथा।  
 न च मारीभयं क्वापि सर्वत्र सुखभागभवेत्॥  
 आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रं पौत्रादि सम्पदः।  
 भवन्ति सततं तस्य पुस्तकस्यापि पूजनात्॥

पार्वत्युवाच —

क एष भैरवो नाम आपदुद्धारको मतः।  
 त्वया च कथितो देव भैरवः कल्प उत्तमः॥

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

३

तस्य नाम सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानी च।  
 सारमुद्धृत्य तेषां वै नामाष्टशतकं वद॥  
 यानि संकीर्तयन्मर्त्यः सर्वं दुःखं विवर्जितः।  
 सर्वान् कामानवाप्नोति साधकः सिद्धिमेव च॥

ईश्वर उवाच -

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः।  
 आपदुद्धारणस्येह नामाष्टशतमुत्तमम्॥  
 सर्वं पापहरं पुण्यं सर्वापद्धि निवारणम्।  
 सर्वं कामार्थदं देवि साधकानां ग्राहकम्॥  
 सर्वं मंगलं मांगल्यं सर्वोपद्रव नाशनम्।  
 आयुष्करं पुष्टिकरं श्रीकरं च यशस्करम्॥  
 नामाष्टशतकस्यास्य छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम्।  
 बृहादारण्यको नाम ऋषिर्देवोथ भैरवः॥  
 अष्टबाहुं त्रिनयनं बीजशक्तिः समीरिते।  
 ॐ कीलकं शेषमिष्टसिद्धौ तु विनियोजयेत्॥  
 सर्वकामार्थं सिद्धयर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः।  
 आदौ कृत्वा षडङ्गं च हां वां बीजादि निर्मितम्॥  
 अंगुष्ठादिकरान्तं च यथोक्तं हृदयादिकम्।  
 न्यासं कुर्याच्च विधिवत् भक्त्या भैरव तुष्टये॥  
 सद्योजातादिभिर्मन्त्रैः कनिष्ठिकादिपूर्वकम्।  
 देहन्यासकं चैव पूर्वं कुर्याच्च साधकः॥  
 यथा कामनया ध्यात्वा ध्यानं च त्रिविधं यतः।  
 आद्यन्ते स्तोत्रपाठस्य मूलमन्त्रं जपेन्नरः॥  
 अष्टोत्तरशतं धीमान्यथासंख्यमथापि च।  
 जपान्तेऽप्युत्तरन्यासाः कर्तव्या जपसिद्धये॥  
 एवंन्यासविधिं देवि भैरवस्य महात्मनः।  
 नामाष्टशतकं पञ्चाज्जपेदापन्निवारकम्॥  
 स्थानेषु येषु नामानि शृणु मत्प्राणवल्लभे।



अथ देहान्यासनामानि —

भैरवं मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे भीमदर्शनम्।  
 अक्षणोर्भूताश्रयं न्यस्य कर्णयोर्भूत नायकम्॥  
 नासिकायां त्रिशूलं च जिह्वायां रक्तपं न्यसेत्।  
 कण्ठमध्ये नागहारं नागहारोपवीतकम्॥  
 क्षेत्रज्ञं करयोर्मध्ये क्षेत्रपालं हृदिन्यसेत्॥  
 क्षेत्रदं नाभिदेशे तु कट्यां सर्वाधनाशनम्।  
 त्रिनेत्रभुवो विन्यस्य जंघयो रक्तपायिनम्॥  
 पादयोर्देवदेवेशं सर्वाङ्गे बटुकं न्यसेत्।  
 एवं न्यासविधिं कृत्वा स साक्षाद्भैरवो भवेत्॥  
 अथातः सम्प्रवक्ष्यामि अङ्गुलीन्यासमुत्तमम्।  
 न्यसेद्भैरव अङ्गुष्ठे तर्जन्यां भीमदर्शनम्॥  
 भूतश्रेष्ठ मध्यमायामनाम्यां भूतनायकम्।  
 कनिष्ठिकायां क्षत्रियं क्षेत्रपालं करद्वये॥  
 क्षेत्रज्ञं दिग्दिशायां वै भैरवं सर्वतः पुनः॥

अथाङ्गन्यास —

भैरवं शिरसिन्यस्य ललाटे भीमदर्शनम्।  
 नेत्रयोर्भूत हननं सारमेयानुगं भुवौ॥  
 कर्णयोर्भूतनाथं च प्रेतवाहं कपोलयोः।  
 नासापुटोष्ठयोश्चैव भस्माङ्ग सर्पभूषणम्।  
 अनादिनाथमास्ये च शक्तिहस्तं गले न्यसेत्॥  
 स्कन्धयोर्देव्य शमनं बाह्वोरतुल तेजसम्।  
 पाण्योः कपालिनं न्यस्य हृदये मुण्डमालिनम्॥  
 शान्तं वक्षस्थले न्यस्य स्तनयोः कामचारिणम्।  
 उदरे च सदा तुष्टं क्षेत्रेशं पार्श्वयोस्तथा॥  
 क्षेत्रपालं पृष्ठदेशे क्षेत्रज्ञं नाभिदेशके।  
 पापौघनाशनं कट्यां बटुकं लिंगदेशके॥

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

५

गुदे रक्षाकरंन्यस्य तथोर्वो रक्तपायिनम्।  
 गुल्फयोर्पादुका सिद्धि पादपृष्ठे सुरेश्वरम्॥  
 आपाद मस्तकं चैव आपदुद्धारकं तथा॥

ॐ ह्रीं क्ष्म्रौं ब्रौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारण भैरवाय नमः॥  
 अनेन व्यापकं।

पूर्वं डमरुहस्तं च दक्षिणे दण्डधारिणम्।  
 खड्गहस्तं पश्चिमायां घंटावादिनमुत्तरे॥  
 आग्नेयामग्निवर्णां च नैऋत्यांच दिगम्बरम्।  
 वायव्यां सर्वभूतस्थमीशान्यां चाष्ट सिद्धिदम्॥  
 ऊर्ध्वं खेचारिणं न्यस्य पाताले रौद्ररूपिणम्।  
 एवं विन्यस्य देहेषु कराङ्गेषु ततो न्यसेत्॥  
 रुद्रमङ्गुष्ठयोर्न्यस्य तर्जन्योस्तु शिखीसखम्।  
 शिवं मध्यमयोर्न्यस्यानामिक्योस्तु त्रिशूलिनम्॥  
 ब्रह्माणं तु कनिष्ठायां तलयोस्त्रिपुरान्तकम्।  
 मांसाशिनं कराग्रे तु करपृष्ठे दिगम्बरम्॥  
 हृदये भूतनाथश्च आदिनाथाय मूर्द्धनि।  
 आनन्द पद पूर्वाय नाथानाथ शिखासु च॥  
 सिद्ध शालनाथाय कवचे विन्यसेत्तथा।  
 सहजानन्दनाथाय न्यसेन्नेत्रत्रये तथा॥  
 श्रीमदानन्दनाथाय अस्त्रे चैव प्रपूजयेत्।  
 बीज पूर्वोद्धृतं मन्त्रं न्यासं कुर्याद्विचक्षणः॥

त्रिगुणात्मकं ध्यानम् -

शुद्धस्फटिकसंकाशं सहस्रादित्यवर्चसम्।  
 नीलजीमूत संकाशं नीलाञ्जन समप्रभम्॥  
 अष्टबाहुं त्रिनयनं चतुर्बाहुं द्विबाहुकम्।  
 दंष्ट्राकरालवदनं नूपुराराव संकुलम्॥  
 भुजङ्गमेखलं देवमग्निवर्णं शिरोरुहम्।  
 दिगम्बरं कुमारेशं बटुकाख्यं महाबलम्॥



खट्वांगमसिपाशं च शूलं दक्षिण भागतः।  
डमरुं च कपालं च वरदं भुजगं तथा॥  
आत्मवर्णं समोपेतं सारमेयं समन्वितम्॥

### सात्विकं ध्यानम् -

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्गं।  
दिव्याकल्पैः नवमाणिमयैः किंकिणी नू पुराढ्यैः॥  
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं।  
हस्ताग्राभ्यां बटुकसदृशं शूलदण्डोपधानम्॥

### राजसं ध्यानम् -

उद्यद्भास्कर सन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गं रागस्रजम्।  
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः॥  
नीलग्रीवमुदारभूषणयुतं शीतांशु खण्डोज्ज्वलं।  
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये॥

### तामसं ध्यानम् -

ध्यायेन्नीलादिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं।  
दिग्बन्धं पिंगकेशं डमरुमथसृणि खड्गपाशा भयानि॥  
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रं।  
दिव्याकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत्किंकिणी नूपुराढ्यम्॥

### साधारणं ध्यानम् -

करकलितकपालः कुण्डलीदण्डपाणिस्तरुणतिमिरनील व्यालयज्ञोपवीती।  
क्रतु समय सपर्या विघ्नविच्छेद हेतुर्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम्॥  
आनील कुन्तलमलक्तकरक्तवर्णं, मौनीकृतं कृतमनोज्ञ मुखारविन्दं।  
कल्याण कीर्ति कमनीय कपालपाणिं, वन्दे महाबटुकनाथमभीष्ट सिद्धयै॥

आनम्र सर्वगीर्वाण शिरोभृगाङ्ग संगिनम्।  
भैरवस्यपदाम्भोजं भूयोऽस्य नौमि भूतये॥

क्वाकाशः क्व समीरिणा क्व दहनं क्व पश्य विश्वंभर।  
क्व ब्रह्मा क्व जनार्दनः क्व पशुपतिः केद्रुश्च देवासुराः॥

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

७

कल्पान्तेन भटेनट प्रमुदिता श्री सिद्ध योगीश्वरः।  
लीलानाटक नायको विजयते, देवो बटुक भैरवः॥

ध्यात्वा जपेत्सु संहृष्टा सर्वान्कामानवाप्नुयात्।  
आयुरारोग्यमैश्वर्यं सिद्ध्यर्थं विनियोजयेत्॥

साधकः सर्वलोकेषु सत्यं सत्यं न संशयः।  
लक्ष वारं जपेन्मन्त्रं होमं कुर्याद्यथाविधि॥

ॐ अस्य श्री बटुक भैरव स्तोत्रमंत्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः अनुष्टुप छंदः  
श्री बटुक भैरवो देवता अष्टबाहुमिति बीजम् त्रिनयनमिति शक्तिः प्रणवः  
कीलकम् ममाभीष्ट सिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः।

बृहदारण्यक ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप छन्दसे नमो मुखे  
बटुक भैरव देवतायै नमः हृदि, अष्ट बाहुमिति बीजाय नमः गुह्ये  
त्रिनयनमिति शक्तये नमः पादयोः, ॐ कीलकाय नमः नाभौ  
ॐ विनियोगाय नमः सर्वज्ञे।

ॐ ह्रां वां ईशाना सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ग्रहाधिपतिर्ब्रह्मणोधि-  
पतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्। अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥

ॐ ह्रीं वीं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।  
तर्जनीभ्यां। नमः॥

ॐ हूं वूं अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्व सर्वेभ्यो  
नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः। मध्यमाभ्यां नमः॥

ॐ ह्रैं वैं वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः। कालाय  
नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः  
सर्व भूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः। अनामिकाभ्यां नमः॥

ॐ ह्रौं वौं सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। कनिष्ठिकाभ्यां  
नमः॥

ॐ हं वं पंचवक्त्राय महादेवाय नमः। करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥

हृदयादिन्यास - उपर्युक्त।



## देहन्यासः —

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः मूर्ध्नि  
 ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे  
 ॐ ह्रीं भूताश्रयाय नमः नेत्रयोः  
 ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः कर्णयोः  
 ॐ ह्रीं त्रिशूलाय नमः नासिकायाम्  
 ॐ ह्रीं रक्तपाय नमः जिह्वायाम्  
 ॐ ह्रीं नागहारयज्ञोपवीतिने नमः कण्ठमध्ये  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः करयोः  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः हृदये  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रदाय नमः नाभौ  
 ॐ ह्रीं सर्वाघनाशनाय नमः कट्याम्  
 ॐ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः ऊर्वो  
 ॐ ह्रीं रक्तपायिने नमः जंघयोः  
 ॐ ह्रीं देवदेवेशाय नमः सर्वाङ्गे ॥

## करन्यासः —

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः तर्जनीभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं भूतश्रेष्ठाय नमः मध्यमाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः अनामिकाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं क्षत्रियाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः दिग्दिशायाम् ॥

## अथाङ्गन्यासः —

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः शिरसि  
 ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे  
 ॐ ह्रीं भूतहन्त्राय नमः नेत्रयोः  
 ॐ ह्रीं सारमेयानुगाय नमः भ्रुवौ  
 ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः कर्णयोः  
 ॐ ह्रीं प्रेतवाहकाय नमः कपोलयोः  
 ॐ ह्रीं भस्माङ्गाय नमः नासापुटे  
 ॐ ह्रीं सर्पभूषणाय नमः ओष्ठयोः  
 ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः मुखे  
 ॐ ह्रीं शक्तिहस्ताय नमः कण्ठे  
 ॐ ह्रीं दैत्यशमनाय नमः स्कन्धयोः  
 ॐ ह्रीं अतुलतेजसे नमः बाह्वौ  
 ॐ ह्रीं कपालिने नमः करयोः  
 ॐ ह्रीं मुण्डमालिने नमः हृदये  
 ॐ ह्रीं शान्ताय नमः वक्षःस्थले  
 ॐ ह्रीं कामचारिणे नमः स्तनयोः  
 ॐ ह्रीं सदातुष्टाय नमः उदरे  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रेशाय नमः पार्श्वयोः  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः पृष्ठे  
 ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः नाभौ  
 ॐ ह्रीं पापौघनाशनाय नमः कट्याम्  
 ॐ ह्रीं बटुकाय नमः लिङ्गे  
 ॐ ह्रीं रक्षाकराय नमः गुदे  
 ॐ ह्रीं रक्तलोचनाय नमः ऊर्वोः

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

९

ॐ ह्रीं घुर्घुराय नमः जानुनो      ॐ ह्रीं सुरेश्वराय नमः पादपृष्ठे  
 ॐ ह्रीं रक्तपायिने नमः जंघयोः      ॐ ह्रीं आपदुद्धारकाय नमः  
 ॐ ह्रीं सिद्धपादुकाय नमः गुल्फयोः      आपादतल मस्तकपर्यन्तं न्यसेत्।  
 ॐ ह्रीं क्ष्रौं वौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारण भैरवाय नमः।  
 अनेन सर्वाङ्गे व्यापकं कुर्यात्॥

अथ दिङ्म्यासः -

ॐ ह्रीं डमरुहस्ताय नमः पूर्वे      ॐ ह्रीं दण्डधारिणे नमः दक्षिणे  
 ॐ ह्रीं खड्गहस्ताय नमः पश्चिमे      ॐ ह्रीं घन्टावादिने नमः उत्तरे  
 ॐ ह्रीं अग्निवर्णाय नमः आग्नेये      ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः नैऋत्ये  
 ॐ ह्रीं सर्वभूतस्थाय नमः वायव्ये      ॐ ह्रीं अष्टसिद्धिदाय नमः ईशान्ये  
 ॐ ह्रीं खेचारिणे नमः ऊर्ध्वम्      ॐ ह्रीं रौद्ररूपिणे नमः पाताले

अथ करम्यासः -

ॐ ह्रीं रुद्राय नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं शिखीसखाय नमः तर्जनीभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं शिवाय नमः मध्यमाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं त्रिशूलिने नमः अनामिकाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं ब्रह्मणे नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः  
 ॐ ह्रीं त्रिपुरान्तकाय नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः

षडङ्गम्यासः -

ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः हृदये नमः  
 ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः शिरसे स्वाहा  
 ॐ ह्रीं आनन्दनाथाय नमः शिखायै वषट्  
 ॐ ह्रीं सिद्ध शाबरनाथाय नमः कवचाय हुं  
 ॐ ह्रीं सहजानन्दनाथाय नमः नेत्रत्रयाय वौषट्  
 ॐ ह्रीं आनन्दनाथाय नमः अस्त्राय फट्

ॐ अस्य श्री बटुकभैरव मन्त्रस्य बृहदारण्यकऋषिः अनुष्टुप छन्दः  
 श्रीबटुकभैरवो देवता वं वीजं ह्रीं शक्तिः ॐ कीलकम् श्रीबटुकभैरवप्रसाद  
 सिद्ध्यर्थं स्तोत्रादि अष्टोत्तर शत मूलमन्त्रं जपे विनियोगः।



ध्यानम् ( सकलमनोरथ प्राप्त्यर्थ ) —

शुद्धरफटिकसंकाशं ... सारमेय समन्वितम्॥

एवं ध्यात्वा -

ॐ ह्रीं भैरव भयकरहर मां रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

इति मन्त्रेण प्रार्थयित्वा -

अद्येत्यादि मम सकल कामना सिद्ध्यर्थे श्रीबटुकभैरव स्तोत्रस्य एकादश सहस्र पुरश्चरणागत्वेन प्रतिस्तोत्रं मूलमन्त्रस्य अष्टोत्तरशत संख्या जप सम्पुटितं च शतसंख्या पाठमहं करिष्ये॥ मूलमन्त्र १०८ बारं जपेत्।

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ।

### स्तोत्रम्

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।

क्षेत्रदः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्॥

श्मशानवासी मांसासी खर्पराशी स्मरान्तकृत्।

रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धिसेवितः॥

कंकालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कवि।

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिंगललोचनः॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कंकाली धूम्रलोचनः।

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः॥

धनदो धनहारी च धनवान् प्रीतिभावितः।

नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः॥

त्रिनेत्रतनयो डिंभः शान्तः शान्तजनप्रियः।

बटुको बहुवेशश्च खट्वांग वरधारकः॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।

धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः॥

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

११

प्रशान्तः शान्तिदः सिद्धः शंकरः प्रियबान्धवः।  
 अष्टमूर्ति निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः॥  
 अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।  
 भूधरो भूधराधीशी भूपतिर्भूधरात्मजः॥  
 कंकालधारी मुण्डी च नागयज्ञोपवीतवान्।  
 जृम्भणो मोहनस्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा॥  
 शुद्ध नीलांजनप्रख्यो दैत्यहा मुंडभूषितः।  
 बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालो बालपराक्रमः॥  
 सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।  
 कामी कलानिधिः कान्तः कामिनीवशकृद्वशी॥  
 सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यो प्रभुर्विष्णुरितीवहि।  
 अष्टोत्तरशतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः॥

### फलश्रुतिः

मया ते कथितं देवि रहस्यं सर्वकामदम्।  
 य इदं पठति स्तोत्रं नामाष्टशतमुत्तमम्॥  
 न तस्य दुरितं किञ्चिन्न च भूतभयं तथा।  
 न च मारीभयं तस्य ग्रहराजभयं तथा॥  
 न शत्रुभ्यो भयं क्वापि प्राप्नुयान्मानवः क्वचित्।  
 पातकानां भयं नैव पठेत्स्तोत्रमनुत्तमम्॥  
 मारीभये राजभये तथा चौराग्निजे भये।  
 औत्पत्तिके महाघोरे तथा दुःस्वप्नदर्शने॥  
 बन्धने च तथा घोरे पठेत्स्तोत्रमनन्यधीः।  
 सर्वं प्रशमनं याति भयं भैरवकीर्तनात्॥  
 एकादशसहस्रं तु पुरश्चरणमुच्यते।  
 यस्त्रिसन्ध्यं पठेद्देवि संवत्सरमतंद्रितः॥  
 स सिद्धिं प्राप्नुयादिष्टां दुर्लभामपि मानवः।  
 षण्मासं भूमिकामस्तु जपित्वा प्राप्नुयान्महीम्॥



राजशत्रु विनाशाय जपेन्मासाष्टकं पुनः।  
 रात्रौ वारत्रयं चैव नाशयत्येव शात्रवान्॥  
 जपेन्मासत्रयं मर्त्यो राजानं वशमानयेत्।  
 धनार्थी च सुतार्थी च दारार्थी यस्तु मानवः॥  
 जपेन्मासत्रयं देवि वारमेकं तथा निशि।  
 धनं पुत्रं तथा दारान्प्राप्नुयान्नात्र संशयः॥  
 रोगी रोगात् प्रमुच्येत वृद्धो मुच्येत बन्धनात्।  
 भीतो भयात्प्रमुच्येत देवि सत्यं न संशयः॥  
 निगडैश्चापि वृद्धो यः कारागारे निपातितः।  
 शृङ्खला बन्धनं प्राप्तं पठच्चैव दिवानिशम्॥  
 यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।  
 अप्रकाश्यं परं गुह्यं न देयं यस्य कस्यचित्॥  
 सुकुलीनाय शान्ताय ऋजवे दंभवर्जिते।  
 दद्यात्स्तोत्रमिदं पुण्यं सर्वं काम फलप्रदम्॥  
 इति श्रुत्वा ततो देवि नामाष्टशतमुत्तमम्।  
 जजाप परया भक्त्या सदा सर्वे सुरेश्वरी॥  
 भैरवस्य प्रहृष्टोऽभूत् सर्वलोक महेश्वरः।  
 वरं ददाति भक्तेभ्यो पठेत्स्तोत्रमनन्यधीः।  
 सन्तोषं परमं प्राप्य भैरवस्य महात्मनः॥  
 वारं वारं भुवनजननी प्रोच्यते साधुवादः,  
 सत्यं सत्यं जगति सकले भैरवो देव एकः।  
 यां यां सिद्धिं भुवनजठरे कामयेन्मानवो यः,  
 तां तां सिद्धिं वितरति सदा भैरवः सुप्रसन्नः॥  
 पाणिभ्यां परितः प्रपीड्य सुदृढं निश्चोत्य निश्चोत्य च,  
 ब्रह्माण्डम् सकलं प्रचालितरसालोच्यैः फलाभं मुहुः।  
 पायंपायमपाययस्त्रिजगति उन्मत्तवत्तै  
 रसेर्नृत्यंस्ताण्डवमंबरेण शिरसा पायान्महा भैरवः॥

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

१३

विभ्राणः शुभ्रवर्णं द्विगुणनवभुजं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रं,  
 ज्ञानं मुद्रेन्द्रशस्त्रं सविषममुत्तकं शंख भैषज्य चापम्।  
 शूलं खट्वांगबाणान्धमरुमसिगदा वह्निमारोग्य माला-  
 मिष्टाभीतिं च दौर्भिर्जयति खलु महाभैरवः सर्वसिद्धयै॥  
 क्वाकाशः क्वसमीरणः क्वदहन क्वापश्च विश्वंभरः-,  
 क्वब्रह्मा क्वजनार्दनः क्वतरणिः क्वेन्दुश्च देवासुराः।  
 कल्पान्तेभदिशाटन प्रमुदितः श्री सिद्ध योगीश्वरो,  
 क्रीडानाटकनायको विजयते देवो महा भैरवः॥  
 लिखित्वा परया भक्त्या भैरवस्तोत्रमुत्तमम्।  
 अष्टानां ब्राह्मणानां च देयं पुस्तकमादरात्॥  
 यां यां समीहते कामांस्तांस्तां प्राप्नोत्यसंशयम्।  
 इहलोके सुखं प्राप्य पुस्तकस्य प्रसादतः॥  
 शिवलोकमनुप्राप्य शिवेन सह मोदते॥

॥ इति बटुक भैरव स्तवराजः॥

□□□

नोट - शत बार पाठ करने के लिए पहले पाठ में तथा अन्तिम पाठ में फलश्रुति पढ़े।



## श्री बटुक भैरव कवचम्

महादेव उवाच —

प्रीयतां भैरवोदेव नमो वै भैरवाय च।  
देवेशि देहरक्षार्थं कारणं कथ्यतां ध्रुवम्॥  
प्रियन्ते साधका येन विना श्मशानभूमिषु।  
रणेषु चातिघोरेषु महामृत्यु भयेषु च॥  
शृङ्गी सलिलवज्रेषु ज्वरादिव्याधि वह्निषु॥

देव्युवाच —

कथयामि शृणु प्राज्ञ बटुककवचं शुभम्।  
गोपनीयं प्रयत्नेन मातृकाजारजो यथा॥

ॐ अस्य श्री बटुकभैरवकवचस्य आनन्द भैरव ऋषिः त्रिष्टुप्छंदः  
श्री बटुकभैरवो देवता बंवीजं ह्रीं शक्तिः ॐ बटुकायेति कीलकं  
ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः।

ॐ सहस्रारे महाचक्रे कर्पूरधवले गुरुः।  
पातु मां बटुकोदेवो भैरवः सर्वकर्मसु॥  
पूर्वस्यां असितांगो मां दिशि रक्षतु सर्वदा।  
चाग्नेयां च रुरुः पातु दक्षिणे चण्ड भैरवः॥  
नैऋत्यां क्रोधनः पातु उन्मत्तः पातु पश्चिमे।  
वायव्यां मां कपाली च नित्यं पायात् सुरेश्वरः॥  
भीषणो भैरवः पातु उत्तरस्यां तु सर्वदा।  
संहार भैरवः पायात् ईशान्यां च महेश्वरः॥  
ऊर्ध्वं पातु विधाता च पाताले नन्दको विभुः।  
सद्योजातस्तु मां पायात् सर्वतो देवसेवितः॥

अथ श्री बटुकभैरव स्तवराजः

१५

वामदेवो वनान्ते च वने घोरस्तथाऽवतु।  
 जले तत्पुरुषा पातु स्थले ईशान एव च॥  
 डाकिनी पुत्रकः पातु पुत्रान् मे सर्वतः प्रभुः।  
 हाकिनी पुत्रकः पातु दारांस्तु लाकिनी सुतः॥  
 पातु शाकिनिकापुत्रः सैन्यं मे कालभैरवः।  
 मालिनी पुत्रकःपातु पशूनश्वान् गजांस्तथा॥  
 महाकालोऽक्षेत्रं श्रियं मे सर्वतो गिरा।  
 वाद्यं वाद्यप्रियः पातु भैरवो नित्यसम्पदा॥  
 एतद् कवचमीशान तव स्नेहात्प्रकाशितम्।  
 नाख्येयं नरलोकेषु सारभूतं सुरप्रियम्॥  
 यस्मै कस्मै न दातव्यं कवचं सुरदुर्लभम्।  
 न देयं पर शिष्येभ्यः कृपणेभ्यश्च शंकर॥  
 यो ददाति निषिद्धेभ्यः सर्वभ्रष्टो भवेत्किल।  
 अनेन कवचेनैव रक्षां कृत्वा विचक्षणः॥  
 विरचरन्त्यत्र कुत्रापि न विघ्नैः परिभूयते।  
 मन्त्रेण रक्षिते योगी कवचं रक्षकं यतः॥  
 तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन दुर्लभं पापं चेतसाम्।  
 भुर्जे रंभात्वचि वापि लिखित्वा विधिवत्प्रभो॥  
 कुंकुमेनाष्टगन्धेन गोरोचनैश्च केशरैः।  
 धारयेत्पाठयेदपि संपठेद्वापि नित्यशः॥  
 सम्प्राप्नोति फलं सर्वं नात्र कार्या विचारणा।  
 सततं पठ्यते यत्र तत्र भैरव संस्थितिः॥  
 न शक्नोमि प्रभावं वै कवचस्यास्यवर्णितुम्।  
 नमो भैरवदेवाय सर्वभूताय वै नमः॥  
 नमस्त्रैलोक्य नाथाय नाथनाथाय वै नमः॥

॥ इति भैरव तन्त्रोक्तं भैरवकवचम् ॥



## बटुक भैरव ब्रह्म कवचम्

श्री देव्युवाच -

भगवन् सर्ववेत्ता त्वं देवानां प्रीतिदायकम्।  
भैरवं कवचं ब्रूहि यदि चास्ति कृपा मयि॥  
प्राणत्यागं करिष्यामि यदि नो कथयिष्यति।  
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यमेव न संशयः॥  
इत्थं देव्या वचः श्रुत्वा प्रहस्याति स्वयं प्रभुः।  
उवाच वचनं तत्र देवदेवो महेश्वरः॥

ईश्वर उवाच -

बटुक कवचं दिव्यं शृणु मत्प्राणवल्लभे।  
चण्डिकातन्त्रं सर्वस्वं बटुकस्य विशेषतः॥  
तत्र मन्त्राद्यक्षरं तु वासुदेव स्वरूपकम्।  
शंख वर्णोद्भयो ब्रह्मा बटुकः चन्द्रशेखरः॥  
आपदुद्धारणो देवो भैरवः परिकीर्तितः।  
प्रवक्ष्यामि समासेन चतुर्वर्गप्रसिद्धये॥  
प्रणवं कामदं विद्या लज्जाबीजं च सिद्धिदम्।  
बटुकायेति विज्ञेयं महा पातक नाशनम्॥  
आपदुद्धारणायेति त्वापदुद्धारणं नृणाम्।  
कुरुद्वयं महेशानि मोहने परिकीर्तितम्॥  
द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रः क्रमेण जगदीश्वरि॥

ॐ अस्य श्री बटुकभैरव ब्रह्म कवचस्य भैरव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः  
श्री बटुक भैरवोदेवता मम श्री बटुक भैरव प्रसाद सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः॥

ॐ पातु शिरसि नित्यं पातु ह्रीं कण्ठदेशके।  
बटुकाय पातु नाभौ चापदुद्धारणाय च॥

कुरुद्वयं लिंगमूले त्वाधारे बटुकाय च।  
 सर्वदा पातु हीं बीजं बाहोर्युगलमेव च॥  
 षडंगसहितो देवो नित्यं रक्षतु भैरवः।  
 ॐ हीं बटुकाय सततं सर्वाङ्गं मम सर्वदा॥  
 ॐ हीं पादौ महाकालः पातु वीरासनो हृदि।  
 ॐ हीं कालः शिरः पातु कण्ठदेशे तु भैरवः॥  
 गणराट् पातु जिह्वायामष्टभिः शक्तिभिः सह।  
 ॐ हीं दण्डपाणिर्गुह्यमूले भैरवी सहितस्तथा॥  
 ॐ हीं विश्वनाथः सदा पातु सर्वाङ्गं मम सर्वदा।  
 ॐ हीं अन्नपूर्णा सदापातु चांसौ रक्षतु चण्डिका॥  
 असितगः शिरः पातु ललाटं रुरु भैरवः।  
 चण्ड भैरव पातु वक्त्रं कण्ठं श्री क्रोध भैरवः॥  
 उन्मत्त भैरवः पातु हृदयं मम सर्वदा।  
 नाभिदेशे कपाली च लिंगे भीषण भैरवः॥  
 संहार भैरवः पातु मूलाधारं च सर्वदा।  
 बाहुयुग्मं सदापातु भैरवो मम केवलम्॥  
 हंसबीजं हृदि पातु सोहं रक्षतु पादयोः।  
 प्राणापानौ समानं च उदानं व्यानमेव च॥  
 रक्षन्तु हारमूले च दशदिक्षु समन्ततः।  
 प्रणवः पातु सर्वाङ्गं लज्जाबीजं महाभये॥  
 इति ब्रह्मकवचं भैरवस्य प्रकीर्तितम्।  
 चतुर्वर्गप्रदं नित्यं स्वयं देव प्रकाशितम्॥  
 यः पठेच्छृणुयान्नित्यं धारयेत्कवचोत्तमम्।  
 सदानन्दमयो भूत्वा लभते परमं पदम्॥  
 य इदं कवचं देवि चिन्तयेन्मन्मुखोदितम्।  
 कोटिजन्मार्जितं पापं विनश्यति च तत्क्षणात्॥  
 जलमध्ये अग्निमध्ये वा दुर्ग्रहे शत्रुसंकटे।  
 कवचस्मरणादेवि सर्वत्र विजयी भवेत्॥  
 भक्ति युक्तेन मनसा कवचं पूजयेद्यदि।  
 कामतुल्यस्तु नारीणां रिपूणां च यमोपमः॥



तस्य पादाम्बुजद्वंदं राज्ञां मुकुटभूषणम्।  
 तस्य भूतिं विलोक्यैव कुवेरोपि तिरस्कृतः॥  
 अस्य विज्ञानमात्रेण मन्त्रसिद्धिर्न संशयः।  
 इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेत् बटुकं नरः॥  
 न चाप्नोति फलं तस्य परं नरकमाप्नुयात्।  
 मन्वन्तरं त्रयं स्थित्वा तिर्यग्योनिषु जायते॥  
 इहलोके महारोगी दारिद्र्येणाति पीडितः।  
 शत्रूणां वशगो भूत्वा करपात्री भवेज्जडः॥  
 देयं पुत्राय शिष्याय शान्ताय प्रियवादिने।  
 कार्पण्यं रहितायां बटुकभक्तिरताय च॥  
 यः परस्मै प्रदाता वै तस्य तस्याति सत्वरम्।  
 आयुर्विद्या यशो धर्मं बलं नश्यत्यसंशयम्॥  
 इति ते कथितं देवि गोपनीयं स्वयोनिवत्॥

॥ रुद्रयामलोक्त बटुक भैरव ब्रह्म कवचम् समाप्तम् ॥

□□□

## बटुक भैरव कवचम्

देव्युवाच —

देव देव जगन्नाथ त्रिनाथ श्रीत्रिलोचनः।  
भवत्प्रसादाद्भगवन्भैरवस्य महात्मनः॥  
कवचं श्रोतुमिच्छामित्वत्तनेहातिशयादहम्॥

शिव उवाच —

प्राणिनां रक्षणार्थं च ब्रवीमि सुमुखे गुणान्।  
वर्मणो भैरवस्यास्य शिव ब्रह्मा ऋषिः स्मृतः॥  
छन्दोनुष्टुप् तथा देवो भैरवो बटुकात्मजा।  
ऐश्वर्यस्याभिवृद्ध्यर्थमिष्टार्थं च नियुज्यते॥  
शूलखड्ग डमरुलसत्करं सव्यहस्तमपरं करोज्वलम्।  
सन्ततं हृदि भजामि भैरवं स्वाधिरूढमधिकार सिद्धये॥  
दिग्वाससं कमलपत्र विशालनेत्रं।  
भस्मांगरागमभयं प्रभुमादि देवम्॥  
ध्यायामि तं बटुकनाथमहर्निशं मे।  
सर्वार्थसिद्धिमनुलां कृपया दिशन्तम्॥  
एवं ध्यात्वा तु देवेशं बटुकाख्यं महाबलम्।  
उच्चरैत कवचं पश्चाद्देवताभीष्ट सिद्धिदम्॥  
शिरो मे भैरवः पातु भालं पुरनिषूदनः।  
दृशौ पातु त्रिनेत्रो मे श्रवणं नीलकण्ठकः॥  
दिग्वासा पातु मे कण्ठं नासिकांममनन्यभाक्।  
ओष्ठौ त्रिपुरघाती मे जिह्वां पातु कपालधृक्॥  
दन्तान्पातु क्रतुध्वंसी चिबुकं भूतवासकः।  
कपाली पातु मे ग्रीवां स्कन्धौ पातु गजान्तकः॥



भुजौ मे पातु कौमारी हृदयं क्षेत्रपालकः।

अभीरुर्मे स्तनौ पातु वक्षः पातु महेश्वरः॥

कुक्षौ मे पातु संहर्ता नाभिं मे षण्मुखप्रियः।

भूतनाथः कटिं पातु गुह्यं पातु जटाधरः॥

ऊरू पातु वृषारूढो जानुनी भूत भावनः।

श्मशानवासी मे पातु पातु सर्वाङ्गमीश्वरः॥

य इदं कवचं देवि पठेत्प्रयत मानसः।

तस्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थमिष्टान्नं च ददाम्यहम्॥

रोगार्तो मुच्यते रोगात्पुत्रार्थी लभते सुतम्।

जपित्वा श्रद्धया कन्या आयुष्मन्तं पतिं लभेत्॥

विद्या विनय सम्पन्नं सुकुलीनं सुरुपिणम्।

जपित्वा विधवा नारी वैधव्यं नाप्नुयात्क्वचित्॥

जपित्वा कवचं प्रातर्मुच्यते नात्र संशयः।

नास्ति तस्यापमृत्युश्चाकालमृत्युः कदाचन॥

इहलोके सुखं भुक्त्वा पुत्र पौत्रैः सबान्धवैः।

अन्ते कैलाशमाविश्य मम पादतलं व्रजेत्॥

तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन जपेन्नित्यमतन्द्रितः॥

ये भक्ति युक्ताः कवचं पठन्ति ।

ते वै कुले स्वे कुलिनो वसन्ति॥

तेजोधिकं विंशतिसंख्यया दिने ।

कैलासमाप्नोति मम प्रसादात्॥

एतत्ते कथितं देवि यन्मां त्वं परिपृच्छति।

तव स्नेहातिशयादुक्तं कवचं भैरवात्मकम्॥

॥ इति बटुक भैरव कवचम्॥

## श्री बटुक भैरव पञ्जर कवचम्

श्री पार्वत्युवाच—

देव देव महादेव संसार प्रियकारक।  
पञ्जरं बटुकस्यास्य कथनीयं मम प्रभो॥

श्री शिव उवाच —

पूर्वं भस्मासुर त्रासाद् भयविह्वलतां स्वयम्।  
पठनादेव मे प्राणा रक्षिताः परमेश्वरि॥  
सर्वदुष्ट विनाशाय सर्वरोग निवारणम्।  
दुःख शान्तिकरं देवि ह्यल्पमृत्यु भयापहम्॥  
राज्ञां वश्यकरं चैव त्रैलोक्य विजयप्रदम्।  
सर्वलोकेषु पूज्यश्च लक्ष्मीस्तस्य गृहे स्थिरा॥  
अनुष्ठानं कृतं देवि पूजनं च दिने दिने।  
विना पञ्जरपाठेन तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥

अस्य श्री बटुक भैरव पञ्जर कवच मन्त्रस्य कालाग्निरुद्र ऋषिः अनुष्टुप  
छन्दः श्री बटुक भैरवो देवता हां बीजं ॐ भैरवी वल्लभा शक्तिः ॐ दण्डपाणये  
नमः कीलकम् मम सकल कामना सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ॐ हां प्राच्यां डमरुहस्तो रक्तवर्णो महाबलः।  
प्रत्यक्षमहमीशान बटुकाय नमो नमः॥  
ॐ ह्रीं दण्डधारी दक्षिणे च पश्चिमे खड्गधारिणे।  
ॐ हूं घन्टावादी मूर्ति उत्तरस्यां दिशि तथा॥  
ॐ ह्रैं अग्निरूपो ह्याग्नेयां नैऋत्यां च दिगम्बरः।  
ॐ हौं सर्वभूतस्थो वायव्ये भूतानां हितकारकः॥  
ॐ हश्चाष्ट सिद्धिश्च ईशाने सर्वसिद्धिकरः परः।  
प्रत्यक्षमहमीशान बटुकाय नमो नमः॥



ॐ हां हीं हूं हैं हौं हः स्वाहा ऊर्ध्वं खेचरिणं न्यसेत्।  
 रुद्ररूपस्तु पाताले बटुकाय नमो नमः॥  
 ॐ हीं बटुकाय मूर्ध्नि ललाटे भीमरूपिणम्।  
 आपदुद्धारणं नेत्रे मुखे च बटुकं न्यसेत्॥  
 कुरु कुरु सर्वसिद्धिर्देहे गेहे व्यवस्थितः।  
 बटुकाय हीं सर्वदेहे विश्वस्य सर्वतो दिशि॥  
 आपदुद्धारकः पातु ह्यापादतल मस्तकम्।  
 ह स क्ष म ल व र यूं पातु पूर्वे दण्डहस्तस्तु दक्षिणे॥  
 ह स क्ष म ल व र यूं नैऋत्यै ह स क्ष म ल व र यूं पश्चिमेऽवतु।  
 सर्वभूतस्थो वायव्ये ह स क्ष म ल व र यूं घंटावादिन उत्तरे॥  
 हंसः सोहं तु ईशाने चाष्टसिद्धिकरः परः।  
 शं क्षेत्रपाल ऊर्ध्वे तु पाताले शिवसन्निभः॥  
 एवं दशदिशो रक्षेद्बटुकाय नमो नमः।  
 इति ते कथितं हीं श्रीं क्लीं ऐं सदावतु॥  
 ॐ फ्रें हुं फट् च सर्वत्र त्रैलोक्ये विजयी भवेत्।  
 लक्ष्मीं ऐं श्रीं लं पृथिव्यां च आकारोहं ममावतु॥  
 स्त्रीं प्रौं ज्रौं ॐ यं वायव्यां रं रं रं तेजोरूपिणम्।  
 ॐ कं खं गं घं ङं बटुकं चं छं जं झं जं कपालिनम्॥  
 टं ठं डं ढं णं क्षेत्रेशं तं थं दं धं नं उमाप्रियम्।  
 पं फं बं भं मं ममरक्ष यं रं लं भैरवोत्तमम्॥  
 वं शं षं सं आदिनाथं लं क्षं वै क्षेत्रपालकम्।  
 एवम् पञ्जरमाख्यातं सर्वसिद्धिकरं भवेत्॥  
 दुःख दारिद्र्य शमनं रक्षकं सर्वतो दिशः।  
 अवश्यसर्वतोवश्यं सर्वबीजैश्च सम्पुटम्॥  
 सर्वरोगहरं दिव्यं सर्वत्र सुखमाप्नुयात्।  
 एवं रहस्यमाख्यातं देवानामपि दुर्लभम्॥  
 वज्रपञ्जरनामेदं ये शृण्वन्ति वरानने।  
 आयुरारोग्यमैश्वर्यं कीर्तिलाभः सुखं जयः॥

लक्ष्मीमनोरमा बुद्धिस्तेषां गेहे व्यवस्थितः।  
 सुशीलाय सुदांताय गुरुभक्तिपराय च॥  
 तस्य शीघ्रं च दातव्यमन्यथा न कदाचन।  
 गोपनीयं प्रयत्नेन सर्वगोप्यमयं भवेत्॥  
 यस्मै कस्मै न दातव्यं न दातव्यं कदाचन।  
 राज्यं देयं शिरो देयं न देयं भैरवाक्षरम्॥  
 एककालं द्विकालं वा त्रिकालं पठते नरः।  
 सर्वपाप विनिर्मुक्तो शिवेन सह मोदते॥

॥ इति शक्ति रहस्योक्त श्री बटुक भैरव पञ्जर कवचम् ॥

□□□



(काल संकर्षण तन्त्रोक्त)

## बटुक भैरव अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रम्

ईश्वर उवाच -

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः।  
बटुकस्य शतं नाम्नामष्टोत्तरमनुत्तमम्॥  
आपदुद्धारकमिदं सर्वशत्रु निवारणम्।  
अपमृत्यु हरं दिव्यमाधिव्याधि निवर्हणम्॥  
विश्वेषां वश्यजननं विवादे विजयप्रदम्।  
मारीभये चौरभये वाताग्नि जलजे भये॥  
सकृत्पठन मात्रेण सर्वोपद्रवनाशनम्।  
धन सम्पत्ति जननं पुत्र पौत्र विवर्द्धनम्॥  
नर नारी नृपाणां च वशीकरणमम्बिके।  
सर्व शास्त्रेषु सारं यद्वेदादभ्युद्धृतं मया॥  
तदहं ते प्रवक्ष्यामि बटुकस्तोत्रमुत्तमम्।  
अस्य श्री बटुकभैरव स्तोत्रमन्त्रस्य सुमहीयसः॥  
ऋषिः कालाग्निरुद्रश्च छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम्।  
आपदुद्धारको देवो देवता बटुकेश्वरः॥  
भैरवी वल्लभः शक्तिर्वीजं ह्रींकार उच्यते।  
कीलकं दण्डपाणिः स्यान्नीलो वर्णः प्रकीर्तितः॥  
समस्तशत्रुदमने समस्तापत्रिवारणे।  
सर्वाभीष्ट प्रदाने च विनियोगः प्रकीर्तितः॥  
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सावधाना शृणुप्रिये।  
यस्य स्मरण मात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते॥  
नीलजीमूतसंकाशो जटिलो रक्तलोचनः।  
दंष्ट्रा कराल वदनः सर्पयज्ञोपवीतवान्॥

दंष्ट्रायुधालंकृतश्च कपालस्रग्विभूषितः।  
 हस्तन्यस्तकिरीटीको भस्म भूषित विग्रहः॥  
 नागराज कटिसूत्रो बालमूर्ति दिगम्बरः।  
 मंजुशिंजान मंजीर पाद कम्पित भूतलः॥  
 भूत प्रेत पिशाचैश्च सर्वतः परिवारितः।  
 योगिनी चक्रमध्यस्थो मातृमण्डलवेष्टितः॥  
 अट्टहासस्फुरद्बक्त्रो भृकुटी भीषणाननः।  
 भक्त संरक्षणार्थाय दिक्षु भ्रमण तत्परः॥  
 एवं भूतस्तु बटुको ध्यातव्यो भैरवीश्वरः।  
 एवं ध्यात्वा ततो नाम्नामष्टोत्तरशतं विभो॥  
 सावधानेन मनसा भक्तियुक्तेन कीर्तयेत्॥  
 तारो माया तदनु बटुकाय द्वयं क्षौं तदाप-  
 च्छब्दोद्धारणाय शिरसि ज्ञेयो कुरु द्वंद्वमुच्चैः॥  
 ह्रीं बीजं यद्बटुकपुटितं भौवनं चाग्निजाया-  
 एषा विद्या बटुकभव ते वाञ्छितं मे ददातु॥

मन्त्र प्रकाश —

ॐ ह्रीं बटुकाय क्षौं क्षौं आपदुद्धारणाय  
 कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं बटुकाय स्वाहा॥

अथ स्तोत्रम्

ॐ ह्रीं बटुको वरदः शूरो भैरवः कालभैरवः।  
 भैरवी वल्लभो भव्यो दण्डपाणिर्दयानिधिः॥  
 वेतालवाहनो रौद्रो रुद्र भृकुटि सम्भवः।  
 कपाललोचनः कान्तः कामिनीवशकृदशी॥  
 आपदुद्धारणो धीरो हरिणांक शिरोमणिः।  
 दंष्ट्राकरालो वृष्टौष्ठौष्ठो दुष्टनिबर्हणः॥  
 सर्पहारः सर्पशिरः सर्पकुण्डलमण्डितः।  
 कपाली करुणापूर्णः कपालीक शिरोमणिः॥



बटुक भैरव अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रम्

२५

दंष्ट्रायुधालंकृतश्च कपालस्रग्विभूषितः।  
 हस्तन्यस्तकिरीटीको भस्म भूषित विग्रहः॥  
 नागराज कटिसूत्रो बालमूर्ति दिगम्बरः।  
 मंजुशिंजान मंजीर पाद कम्पित भूतलः॥  
 भूत प्रेत पिशाचैश्च सर्वतः परिवारितः।  
 योगिनी चक्रमध्यस्थो मातृमण्डलवेष्टितः॥  
 अट्टहासस्फुरद्दवक्त्रो भृकुटी भीषणाननः।  
 भक्त संरक्षणार्थाय दिक्षु भ्रमण तत्परः॥  
 एवं भूतस्तु बटुको ध्यातव्यो भैरवीश्वरः।  
 एवं ध्यात्वा ततो नाम्नामष्टोत्तरशतं विभो॥  
 सावधानेन मनसा भक्तियुक्तेन कीर्तयेत्॥  
 तारो माया तदनु बटुकाय द्वयं क्षौं तदाप-  
 च्छब्दोद्धारणाय शिरसि ज्ञेयो कुरु द्वन्द्वमुच्चैः॥  
 ह्रीं बीजं यद्बटुकपुटितं भौवनं चाग्निजाया-  
 एषा विद्या बटुकभव ते वाञ्छितं मे ददातु॥

मन्त्र प्रकाश —

ॐ ह्रीं बटुकाय क्षौं क्षौं आपदुद्धारणाय  
 कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं बटुकाय स्वाहा॥

अथ स्तोत्रम्

ॐ ह्रीं बटुको वरदः शूरो भैरवः कालभैरवः।  
 भैरवी वल्लभो भव्यो दण्डपाणिर्दयानिधिः॥  
 वेतालवाहनो रौद्रो रुद्र भृकुटि सम्भवः।  
 कपाललोचनः कान्तः कामिनीवशकृद्वशी॥  
 आपदुद्धारणो धीरो हरिणांक शिरोमणिः।  
 दंष्ट्राकरालो दृष्टौष्ठौष्ठो दुष्टनिबर्हणः॥  
 सर्पहारः सर्पशिरः सर्पकुण्डलमण्डितः।  
 कपाली करुणापूर्णः कपालीक शिरोमणिः॥

श्मशानवासी मांसाशी मधुमत्तोदृहासवान्।  
 वाग्मी वामव्रतो वाङ्मी वामदेव प्रियङ्करः॥  
 वनेचरो गिरिचरो वसुदो वायुवेगवान्।  
 योगी योगव्रतधरो योगिनीवल्लभो युवा॥  
 वीरभद्रो विश्वनाथो विजेता वीरवन्दितः।  
 भूताध्यक्षो भूतधरो भूतभीतिनिवारणः॥  
 कलंकहीनः कंकाली क्रूरः कुक्कुरवाहनः।  
 गाढो गहन गंभीरो गणनाथसहोदरः॥  
 देवीपुत्रो दिव्यमूर्तिदीप्तिमान् दीप्तलोचनः।  
 महासेन प्रियकरो मान्यो माधवमातुलः॥  
 भद्रकालीपतिर्भद्रो भद्रदो भद्रवाहनः।  
 पशुपहाररसिकः पाशी पशुपतिः पतिः॥  
 चण्डः प्रचण्डचण्डेशश्चण्डी हृदयनन्दनः।  
 दक्षो दक्षाध्वरहरो दिग्वासा दीर्घलोचनः॥  
 निरान्तको निर्विकल्पः कल्पः कल्पान्तभैरवः।  
 मदताण्डवकृन्मत्तो महादेव प्रियो महान्॥  
 खट्वांगपाणिः खातीतः खरशूलः खरान्तकृत्।  
 ब्रह्माण्डभेदनो ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणपालकः॥  
 दिक्चरो भूचरो भूष्णुः खेचरो खेलनेप्रियः।  
 सर्वदुष्टप्रहर्ता च सर्वरोगनिषूदनः॥  
 सर्वकामप्रदः शर्वः सर्वपापनिवृत्तनः।  
 इत्थमष्टोत्तरशतं नाम्नां सर्वसमृद्धिदं परम्॥  
 आपदुद्धारजनकं बटुकस्य प्रकीर्तितम्।  
 य एतच्छृणुयान्नित्यं लिखेद्वा स्थापयेद्गृहे॥  
 धारयेद्वा गले बाहौ तस्य सर्वाः समृद्धयः।  
 न तस्य दुरितं किञ्चिन्न च चोर नृपजं भयम्॥  
 न चापमृत्यु रोगेभ्यो डाकिनीभ्यो भयं नहि।  
 न कूष्माण्डग्रहादिभ्यो नापमृत्यो न च ज्वरात्॥



बटुक भैरव अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रम्

२७

मासमेकं त्रिसन्ध्यं च शुचिर्भूत्वा पठेन्नरः।  
 सर्व दारिद्र्य निर्मुक्तो निधि पश्यति भूतले॥  
 मासद्वयमधीयानः पादुका सिद्धिमान्भवेत्।  
 अंजनं गुटिका खड्ग धातुवाद रसायनम्॥  
 सारस्वतं च वेतालवाहनं बिल्वसाधनम्।  
 कार्यसिद्धि महासिद्धि मन्त्रम् चैव समीहितम्॥  
 वर्षमात्रमधीयानः प्राप्नुयात्साधकोत्तमः।  
 एतत्ते कथितं देवि गुह्याद्गुह्यतरं परम्॥  
 कालसंकर्षणी तन्त्रे कलिकल्मष नाशनम्॥

॥ इति काल संकर्षण तन्त्रोक्त बटुक भैरव अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रम् ॥

□□□

# श्रीमदापदुद्धारक बटुकभैरव स्तोत्रम्

(अर्थसहितम्)

पं. कृष्णानन्द बुधौलियाकृत कृष्णानन्दीय हिन्दीव्याख्यासहितम्

भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।

क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्॥१॥

## अर्थ

१) भैरव - जिससे क्लेश भयभीत रहता है, जिसके भय से वायु चलती है, सूर्य तपता है, इन्द्र जलवृष्टि करता है, लोकपाल भयभीत होते हैं, जो विश्व का भरण-पोषणकर्ता है, तथा जो भयङ्कर शब्दकारी है उसका नाम भैरव है।

२) भूतनाथ - पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश पञ्चतत्त्व ही पञ्च भूत कहे जाते हैं। जो इन पांच महाभूतों का स्वामी है वह भूतनाथ है। जो भूत अर्थात् जीव की सृष्टि-स्थिति-लय का कर्ता है वह भूतनाथ है अतः भगवान् शंकर का अपर पर्याय है।

३) भूतात्मा - जो भूत अर्थात् प्राणियों का आत्मा है उसको भूतात्मा कहा है अथवा श्रुति कहती है 'एष आत्माऽन्तर्याम्यमृत' जो कर्म करता है उसको विद्वानों ने भूतात्मा कहा है। "यः करोति तु कर्माणि स भूतात्मोच्यते बुधैः"॥

४) भूतभावन - जो आकाश आदि पञ्चभूतों की सृष्टि करता है तथा रक्षा करता है।

५) क्षेत्रज्ञः - पृथ्वी से शिव पर्यन्त छत्तीस तत्त्वों को क्षेत्र कहते हैं। जो क्षेत्र को जानता है अथवा प्रकाशित करता है वह क्षेत्रज्ञ है।

६) क्षेत्रपाल - जीव रूप उपर्युक्त क्षेत्र का जो पालन करता है वह क्षेत्रपाल है।



७) क्षेत्रदः - "क्षेत्रं राज्यस्त्रीभूमिष्विति"। अर्थात् राज्य, स्त्री, भूमि देने वाले भैरव को क्षेत्रद कहा जाता है।

८) क्षत्रियः - क्षत अर्थात् दुःख से जो संसार की अथवा अपने भक्तों की रक्षा करता है वह क्षत्रिय है। भैरव ब्रह्म स्वरूप हैं अतः किसी जाति विशेष का यहाँ अर्थ नहीं है।

९) विराट् - विशेष प्रकाशवान् (विशेषेण राजते) अर्थात् ब्रह्माण्ड स्वरूप।

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी खरान्तकः\*।

रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धिसेवितः॥२॥

१०) श्मशानवासी - श्मशान में रहने वाला 'श्मशानं वसति यस्मिन्' व्युत्पत्ति के अनुसार श्मशान जिसमें वास करता है। संहार के बाद जगत् जिसमें विलीन हो जाता है अर्थात् ब्रह्मस्वरूप। श्मशान सुषुम्ना नाडी का भी नाम है। कहा है - "सुषुम्ना शून्य पद्वी ब्रह्मरन्ध्रं महापथः। श्मशानं शाम्भवीमध्य मार्गश्चेत्येक वाचकः॥" अतः भैरव का निवास सुषुम्ना नाडी है अर्थात् जब सूर्य एवं चन्द्र नाडियों का सञ्चार अवरुद्ध हो जाता है तब योगी को सुषुम्ना में भगवान् भैरव की अनुभूति होती है।

११) मांसाशी - मा का अर्थ है माया, अतः 'मायां स्यति नाशयति मांसः' अर्थात् माया को नष्ट करने वाले विचार अथवा दुष्टों का भक्षण करने वाला मांसाशी -

पुण्यापुण्ये पशुं हत्वा ज्ञानखड्गेन योगिवित्।

परे लयं नयेत् चित्तं मांसाशी स निगद्यते॥

अर्थात् जो पुण्य एवं अपुण्य, धर्म, अधर्म द्वन्दों से परे पारमार्थिक अद्वैत तत्त्व है वह मांसाशी कहा जाता है।

१२) खर्पराशी - जो अस्थि से निर्मित पात्र में भोजन करता है। शिव पुराण के अनुसार अपनी पुत्री के प्रति कामुक ब्रह्मा के शिर को काट कर उसके कपाल में भोजन करने वाला।

१३) खरान्तकः - खर अर्थात् कृष्ण के रूप में धेनुकासुर अथवा राम के रूप में खरदूषण का संहारकर्ता।

\* स्मरान्तकृत् (कामदेव को जलानेवाले) इति पाठान्तरः।

१४) रक्तपः - 'रक्तं अनुरागवन्तं स्वभक्तं पालयति' अर्थात् अपने भक्त का पालक।

१५) पानपः - 'परमज्ञानं तदेव पानं' अज्ञान को नाश कर भक्तों का रक्षक। कोई मद्य पीने वाला ऐसा अर्थ करते हैं। पाठान्तर में प्राणपः भी है जिसका अर्थ है भक्तों के प्राणों का पोषक।

१६) सिद्धः - जो अणिमा, महिमा आदि सिद्धियों से सम्पन्न है। जो स्वयं प्रकट है। परब्रह्म रूप होने से अन्य के द्वारा उत्पादित नहीं है।

१७) सिद्धिदः - जो साधकों को सब प्रकार की सिद्धि प्रदान करता है।

१८) सिद्धिसेवितः - अणिमा आदि सिद्धियां जिसकी सेवा करती है।

कङ्कालः कालशमनः कला काष्ठा तनुः कविः।

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः॥३॥

१९) कङ्कालः - कं अर्थात् शिर को खण्डित करने वाला। ब्रह्मा का पाँचवां शिर भैरव द्वारा खण्डित किया गया। कं सुख को भी कहते हैं अतः सुख देने वाला भी अर्थ होता है। 'कं सुखं कलयति'॥

२०) कालशमनः - काल अर्थात् मृत्यु का शमन करने वाला।

२१) कला काष्ठातनुः - संगीत इत्यादि चौंसठ कलाओं के साक्षात् स्वरूप काष्ठा तनुः का अर्थ विराट् सर्वव्यापी भी किया गया है।

२२) कविः - समस्त शास्त्रों के कर्ता एवं ज्ञाता। परब्रह्म स्वरूप।

२३) त्रिनेत्रः - तीन वेद ही जिनके नेत्र हैं। अथवा सूर्य, चन्द्र, अग्नि तीन नेत्र से युक्त अथवा भक्ति, ज्ञान, वैराग्य नेत्रों से युक्त।

२४) बहुनेत्रः - बहुत नेत्रों से युक्त। मन्त्र में कहा है -  
'सहस्राक्षः सहस्रपादिति'।

२५) पिङ्गल लोचनः - पीले नेत्रों वाले।

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः॥४॥

२६) शूलपाणिः - त्रिशूलधारी। शूल अर्थात् रोगों की मुक्ति के लिये जिसकी स्तुति की जाती है।

२७) खड्गपाणिः - जिसके हाथ में खड्ग अर्थात् तलवार है।



२८) कङ्काली - कं अर्थात् जल को वर्षानेवाला। मेघ का नाम कङ्क है। मेघ के समान वर्ण वाला।

२९) धूम्रलोचनः - धूम्र के समान नेत्रोंवाला।

३०) अभीरुः - निर्भीक, अथवा 'अभित इयर्ति प्राप्नोति' अपने भक्तों को संकट से मुक्त कराने के लिये जो सदैव उपस्थित रहते हैं।

३१) भैरवीनाथ - भैरवी के स्वामी।

३२) भूतप - प्राणियों का रक्षक।

३३) योगिनीपति - जय आदि योगिनियों के पति। 'योगिभिः नीयते प्राप्यते' - योगियों के द्वारा जो प्राप्त की जाती है अर्थात् भक्ति - उस भक्ति के पति।

धनदो धनहारी च धनवान् \*प्रतिभानवान्।

नागहारो \*\*नागकेशो व्योमकेशः कपालभृत्॥५॥

३४) धनद - अपने भक्तों को धन देनेवाला। धनं द्यतीति वा व्युत्पत्ति करने से दुष्टों का धन हरने वाला ऐसा अर्थ हो जाता है।

३५) धनहारी - धन हर्ता। श्रीमद्भागवत में कहा है "यस्यानुग्रहमिच्छामि तस्मिन्सर्वं हराम्यहं"। धन से उन्माद हो जाता है अतः वह जिस पर अनुग्रह करता है उसका धन हर लेता है।

३६) धनवान् - धन से सम्पन्न।

३७) प्रतिभानवान् - नव नवोन्मेषशालिनी बुद्धिः प्रतिभान् अर्थात् जिसकी बुद्धि में नित्य नवीनता का प्रादुर्भाव होता है वह प्रतिभानवान् है।

३८) नागहारः - जो सर्पों को माला के समान धारण करता है।

३९) नागकेशः - नाग अर्थात् सर्पों के समान काले केश जिसके हैं। नाग के ईश अर्थात् नागों के स्वामी। गीता में कहा है कि - 'अनन्त' भगवान की विभूति है। 'अनन्तश्चास्मि नागानाम्'।

४०) व्योमकेशः - व्योम अर्थात् श्याम वर्ण के जिसके केश हैं।

४१) कपालभृत् - नर मुण्ड को धारण करने वाला। कं पालयति अर्थात्

\* प्रीतिभावितः (प्रेम से प्रसन्न होने वाले) इति पाठान्तरः।

\*\* नागपाशो (सर्प-बन्धन धारण करने वाले) इति पाठान्तरः।

कं का अर्थ है स्वर्ग। अतः जो स्वर्ग का पालन करता है वह इन्द्र है, इन्द्र का भी जो भरण करता है वह कपालभृत् है।

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रः त्रिशिखी च त्रिलोकपः॥६॥

४२) काल - समस्त संसार के सञ्चालन कर्ता को काल नाम से कहा गया है - सर्व कलयति।

४३) कपालमाली - मुण्डों की माला जो धारण करता है। अथवा -

“कशब्देन पराशक्तिः पालकः शिव संज्ञया।

शिवशक्तिः समायोगं कपालं परिपठ्यते॥”

क पराशक्ति है, पालक शिव है। अतः शिव-शक्ति का समायोग अर्थात् सामरस्य रूप।

४४) कमनीयः - सुन्दर।

४५) कलानिधिः - कलाओं (चौसठ कलाओं) अर्थात् विद्या का निधि अथवा अग्नि सूर्य चन्द्र की एकत्र ३६० कलाएँ होती हैं, उनका आश्रय भूत।

४६) त्रिलोचनः - ऋग, यजु, साम तीनों वेद जिसके नेत्र हैं। अथवा सूर्य चन्द्र एवं अग्नि जिसके तीन नेत्र हैं।

४७) ज्वलन्नेत्रः - दीप्तिमान नेत्रवाला।

४८) त्रिशिखी - अग्निरूप। अथवा कर्म, उपास्ति, ज्ञान नामक जिसकी तीन शिखायें हैं।

४९) त्रिलोकपः - तीनों लोकों का पालक।

त्रिनेत्र तनयो डिम्भः शान्तः शान्तजनप्रियः।

बटुको बटुकेशश्च खट्वाङ्ग वरधारकः॥७॥

५०) त्रिनेत्रतनयो - त्रिनेत्र अर्थात् शिव के पुत्र कार्तिकेय अथवा गणेश रूप। अथवा ब्रह्म रूप होने से त्रिनेत्रस्तनयो यस्येति व्याख्या होगी अर्थात् त्रिनेत्र जिसका तनय है।

५१) डिम्भ - डिम्भ डिभि धातु से बना है इसका अर्थ है सबको पवित्र करनेवाला। साधक का जब भैरव से तादात्म्य सम्पन्न हो जाता है तब निर्विकल्प अवस्था का आविर्भाव होता है मन की वास्तविक शुद्धि निर्विकल्प अवस्था ही है। बाह्य शुद्धि केवल शरीर की शुद्धि है।



५२) शान्तः - 'भैरवार्णवे तादात्म्य प्राप्तः' अर्थात् चित्त का जब भगवान् भैरव रूप समुद्र में समावेश हो जानेपर तादात्म्य हो जाता है उस अवस्था को शान्त कहा है।

५३) शान्तजनप्रियः - शान्त जनों का प्रिय।

५४) बटुक - बट् धातु का अर्थ है वेष्टन। अतः प्रलय काल में जो समस्त जगत् को अपने अन्तः में वेष्टित कर लेता है अर्थात् समेट लेता है वह सर्वव्यापी तत्त्व भैरव नाम से प्रसिद्ध है। अर्थात् आत्म स्वरूप।

५५) बटुवेष - बटु का अर्थ ब्रह्मचारी है तथा विष्णु भी है। अतः इसका अर्थ है ब्रह्मचारी के समान रूपधारी अथवा वामन रूप विष्णु के समान शरीरधारी। विष्णु सर्वव्यापी हैं अतः यह आत्म रूप भी है।

५६. खट्वाङ्गवरधारकः - खाट के पाये के समान शस्त्र धारण करने वाले। किसी ने खट्वाङ्ग को ज्वलच्चिता काष्ठ भी अर्थ किया है। चिदग्नि की अनुभूति भी विद्युत दण्ड के समान योगियों को होती है। वह भी खट्वाङ्ग के समान है अतः अधः कुण्डलिनी जब ऊर्ध्व कुण्डलिनी से एकाकार होती है तब अग्नि के दण्ड के समान जो अनुभूति होती है वह भी भैरव रूप है।

भूताध्यक्षः पशुपतिः भिक्षुकः परिचारकः।

धूर्तों दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः॥८॥

५७) भूताध्यक्षः - पञ्चभूतों का आश्रय रूप। अथवा प्राणियों का स्वामी।

५८) पशुपतिः - ब्रह्मा से स्थावर पर्यन्त सभी प्राणियों की पशु संज्ञा है। पाशबद्ध होने से भी पशु कहे जाते हैं। अतः पशुपति का अर्थ है जीवों का स्वामी। घृणा, शङ्का, भय, लज्जा, जुगुप्सा, कुल, शील तथा जाति, आठ प्रकार के पाश हैं। इन पाशों से जो जीव को मुक्त करता है वह पशुपति है।

५९) भिक्षुकः - भिक्षून् कायत्युपदिशति अथवा भिक्षूणां कं सुखं यस्मात्। अर्थात् जो भिक्षुओं अर्थात् याचकों को उपदेश करता है अथवा भिक्षुओं के सुख-सुविधा का दाता है वह भैरव भिक्षुक नाम से विख्यात है। भिक्षुयते सर्वेः इति भिक्षुकः अर्थात् जिस से सब अपने कल्याण की याचना करते हैं वह भैरव भिक्षुक नाम से भी कहा जाता है।

६०) परिचारकः - जो क्लेशों को दूर करने वाला है। 'उपासकानां योग क्षेम प्रदानेन परिचरति' अर्थात् जो उपासकों के योगक्षेम के लिये उनके चारों ओर रहता है। वह भगवान् भैरव परिचारक नाम से अभिहित हैं।

१४) रक्तपः - 'रक्तं अनुरागवन्तं स्वभक्तं पालयति' अर्थात् अपने भक्त का पालक।

१५) पानपः - 'परमज्ञानं तदेव पानं' अज्ञान को नाश कर भक्तों का रक्षक। कोई मद्य पीने वाला ऐसा अर्थ करते हैं। पाठान्तर में प्राणपः भी है जिसका अर्थ है भक्तों के प्राणों का पोषक।

१६) सिद्धः - जो अणिमा, महिमा आदि सिद्धियों से सम्पन्न है। जो स्वयं प्रकट है। परब्रह्म रूप होने से अन्य के द्वारा उत्पादित नहीं है।

१७) सिद्धिदः - जो साधकों को सब प्रकार की सिद्धि प्रदान करता है।

१८) सिद्धिसेवितः - अणिमा आदि सिद्धियां जिसकी सेवा करती है।

कङ्कालः कालशमनः कला काष्ठा तनुः कविः।

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः॥३॥

१९) कङ्कालः - कं अर्थात् शिर को खण्डित करने वाला। ब्रह्मा का पाँचवां शिर भैरव द्वारा खण्डित किया गया। कं सुख को भी कहते हैं अतः सुख देने वाला भी अर्थ होता है। 'कं सुखं कलयति'॥

२०) कालशमनः - काल अर्थात् मृत्यु का शमन करने वाला।

२१) कला काष्ठातनुः - संगीत इत्यादि चौंसठ कलाओं के साक्षात् स्वरूप काष्ठा तनुः का अर्थ विराट् सर्वव्यापी भी किया गया है।

२२) कविः - समस्त शास्त्रों के कर्ता एवं ज्ञाता। परब्रह्म स्वरूप।

२३) त्रिनेत्रः - तीन वेद ही जिनके नेत्र हैं। अथवा सूर्य, चन्द्र, अग्नि तीन नेत्र से युक्त अथवा भक्ति, ज्ञान, वैराग्य नेत्रों से युक्त।

२४) बहुनेत्रः - बहुत नेत्रों से युक्त। मन्त्र में कहा है -  
'सहस्राक्षः सहस्रपादिति'।

२५) पिङ्गल लोचनः - पीले नेत्रों वाले।

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।

अभीरुभैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः॥४॥

२६) शूलपाणिः - त्रिशूलधारी। शूल अर्थात् रोगों की मुक्ति के लिये जिसकी स्तुति की जाती है।

२७) खड्गपाणिः - जिसके हाथ में खड्ग अर्थात् तलवार है।



२८) कङ्काली - कं अर्थात् जल को वर्षानेवाला। मेघ का नाम कङ्क है। मेघ के समान वर्ण वाला।

२९) धूम्रलोचनः - धूम्र के समान नेत्रोंवाला।

३०) अभीरुः - निर्भीक, अथवा 'अभित इयर्ति प्राप्नोति' अपने भक्तों को संकट से मुक्त कराने के लिये जो सदैव उपस्थित रहते हैं।

३१) भैरवीनाथ - भैरवी के स्वामी।

३२) भूतप - प्राणियों का रक्षक।

३३) योगिनीपति - जय आदि योगिनियों के पति। 'योगिभिः नीयते प्राप्यते' - योगियों के द्वारा जो प्राप्त की जाती है अर्थात् भक्ति - उस भक्ति के पति।

धनदो धनहारी च धनवान् \*प्रतिभानवान्।

नागहारो \*\*नागकेशो व्योमकेशः कपालभृत्॥५॥

३४) धनद - अपने भक्तों को धन देनेवाला। धनं द्यतीति वा व्युत्पत्ति करने से दुष्टों का धन हरने वाला ऐसा अर्थ हो जाता है।

३५) धनहारी - धन हर्ता। श्रीमद्भागवत में कहा है "यस्यानुग्रहमिच्छामि तस्मिन्सर्वं हराम्यहं"। धन से उन्माद हो जाता है अतः वह जिस पर अनुग्रह करता है उसका धन हर लेता है।

३६) धनवान् - धन से सम्पन्न।

३७) प्रतिभानवान् - नव नवोन्मेषशालिनी बुद्धिः प्रतिभान् अर्थात् जिसकी बुद्धि में नित्य नवीनता का प्रादुर्भाव होता है वह प्रतिभानवान् है।

३८) नागहारः - जो सर्पों को माला के समान धारण करता है।

३९) नागकेशः - नाग अर्थात् सर्पों के समान काले केश जिसके हैं। नाग के ईश अर्थात् नागों के स्वामी। गीता में कहा है कि - 'अनन्त' भगवान की विभूति है। 'अनन्तश्चास्मि नागानाम्'।

४०) व्योमकेशः - व्योम अर्थात् श्याम वर्ण के जिसके केश हैं।

४१) कपालभृत् - नर मुण्ड को धारण करने वाला। कं पालयति अर्थात्

\* प्रीतिभावितः (प्रेम से प्रसन्न होने वाले) इति पाठान्तरः।

\*\* नागपाशो (सर्प-बन्धन धारण करने वाले) इति पाठान्तरः।

कं का अर्थ है स्वर्ग। अतः जो स्वर्ग का पालन करता है वह इन्द्र है, इन्द्र का भी जो भरण करता है वह कपालभृत् है।

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रः त्रिशिखी च त्रिलोकपः॥६॥

४२) काल - समस्त संसार के सञ्चालन कर्ता को काल नाम से कहा गया है - सर्व कलयति।

४३) कपालमाली - मुण्डों की माला जो धारण करता है। अथवा -

“कशब्देन पराशक्तिः पालकः शिव संज्ञया।

शिवशक्तिः समायोगं कपालं परिपठ्यते॥”

क पराशक्ति है, पालक शिव है। अतः शिव-शक्ति का समायोग अर्थात् सामरस्य रूप।

४४) कमनीयः - सुन्दर।

४५) कलानिधिः - कलाओं (चौसठ कलाओं) अर्थात् विद्या का निधि अथवा अग्नि सूर्य चन्द्र की एकत्र ३६० कलाएँ होती हैं, उनका आश्रय भूत।

४६) त्रिलोचनः - ऋग्, यजु, साम तीनों वेद जिसके नेत्र हैं। अथवा सूर्य चन्द्र एवं अग्नि जिसके तीन नेत्र हैं।

४७) ज्वलन्नेत्रः - दीप्तिमान नेत्रवाला।

४८) त्रिशिखी - अग्निरूप। अथवा कर्म, उपास्ति, ज्ञान नामक जिसकी तीन शिखायें हैं।

४९) त्रिलोकपः - तीनों लोकों का पालक।

त्रिनेत्र तनयो डिम्भः शान्तः शान्तजनप्रियः।

बटुको बटुकेशश्च खट्वाङ्ग वरधारकः॥७॥

५०) त्रिनेत्रतनयो - त्रिनेत्र अर्थात् शिव के पुत्र कार्तिकेय अथवा गणेश रूप। अथवा ब्रह्म रूप होने से त्रिनेत्रस्तनयो यस्येति व्याख्या होगी अर्थात् त्रिनेत्र जिसका तनय है।

५१) डिम्भ - डिम्भ डिभि धातु से बना है इसका अर्थ है सबको पवित्र करनेवाला। साधक का जब भैरव से तादात्म्य सम्पन्न हो जाता है तब निर्विकल्प अवस्था का आविर्भाव होता है मन की वास्तविक शुद्धि निर्विकल्प अवस्था ही है। बाह्य शुद्धि केवल शरीर की शुद्धि है।



५२) शान्तः - 'भैरवार्णवे तादात्म्य प्राप्तः' अर्थात् चित्त का जब भगवान् भैरव रूप समुद्र में समावेश हो जानेपर तादात्म्य हो जाता है उस अवस्था को शान्त कहा है।

५३) शान्तजनप्रियः - शान्त जनों का प्रिय।

५४) बटुक - बट् धातु का अर्थ है वेष्टन। अतः प्रलय काल में जो समस्त जगत् को अपने अन्तः में वेष्टित कर लेता है अर्थात् समेट लेता है वह सर्वव्यापी तत्त्व भैरव नाम से प्रसिद्ध है। अर्थात् आत्म स्वरूप।

५५) बटुवेष - बटु का अर्थ ब्रह्मचारी है तथा विष्णु भी है। अतः इसका अर्थ है ब्रह्मचारी के समान रूपधारी अथवा वामन रूप विष्णु के समान शरीरधारी। विष्णु सर्वव्यापी हैं अतः यह आत्म रूप भी है।

५६. खट्वाङ्गवरधारकः - खाट के पाये के समान शस्त्र धारण करने वाले। किसी ने खट्वाङ्ग को ज्वलच्चिता काष्ठ भी अर्थ किया है। चिदग्नि की अनुभूति भी विद्युत दण्ड के समान योगियों को होती है। वह भी खट्वाङ्ग के समान है अतः अधः कुण्डलिनी जब ऊर्ध्व कुण्डलिनी से एकाकार होती है तब अग्नि के दण्ड के समान जो अनुभूति होती है वह भी भैरव रूप है।

भूताध्यक्षः पशुपतिः भिक्षुकः परिचारकः।

धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः॥८॥

५७) भूताध्यक्षः - पञ्चभूतों का आश्रय रूप। अथवा प्राणियों का स्वामी।

५८) पशुपतिः - ब्रह्मा से स्थावर पर्यन्त सभी प्राणियों की पशु संज्ञा है। पाशबद्ध होने से भी पशु कहे जाते हैं। अतः पशुपति का अर्थ है जीवों का स्वामी। घृणा, शङ्का, भय, लज्जा, जुगुप्सा, कुल, शील तथा जाति, आठ प्रकार के पाश हैं। इन पाशों से जो जीव को मुक्त करता है वह पशुपति है।

५९) भिक्षुकः - भिक्षून् कायत्युपदिशति अथवा भिक्षूणां कं सुखं यस्मात्। अर्थात् जो भिक्षुओं अर्थात् याचकों को उपदेश करता है अथवा भिक्षुओं के सुख-सुविधा का दाता है वह भैरव भिक्षुक नाम से विख्यात है। भिक्षुयते सर्वेः इति भिक्षुकः अर्थात् जिस से सब अपने कल्याण की याचना करते हैं वह भैरव भिक्षुक नाम से भी कहा जाता है।

६०) परिचारकः - जो क्लेशों को दूर करने वाला है। 'उपासकानां योग क्षेम प्रदानेन परिचरति' अर्थात् जो उपासकों के योगक्षेम के लिये उनके चारों ओर रहता है। वह भगवान् भैरव परिचारक नाम से अभिहित हैं।

६१) धूर्तः - साधारण रूप से धूर्त वह है जो बाहर मिष्टभाषी होता है किन्तु वस्तुतः अन्तः में छली है। दैत्यों को शमन करने के लिये ही छल की आवश्यकता होती है। महार्थ मञ्जरी में धूर्त का अर्थ विचक्षण किया है अर्थात् सृष्टि, स्थिति, लय, तिरोधान, अनुग्रह पञ्चकृत्यों में दक्ष है।

६२) दिगम्बरः - दिशाएँ ही जिसके आच्छादन के लिये वस्त्र हैं।

६३) शूरः - युद्ध में कुशल।

६४) हरिणः - दुःख का हरणकर्ता।

६५) पाण्डुलोचन - श्वेत वर्ण के नेत्रों से युक्त। अथवा शुन्तैः अन्तःकरणैः आलोच्यते अर्थात् शुद्ध अन्तःकरण के भक्त ही जिनका दर्शन कर सकते हैं।

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्ध\* शङ्करप्रियबान्धवः।

अष्टमूर्तिः निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः॥९॥

६६) प्रशान्तः - अत्यन्त शान्त स्वरूप होने से भैरव को प्रशान्त कहा गया है। तादात्म्य रूप एकीभाव को ही प्रशान्त भाव कहा जाता है।

६७) शान्तिदः - शान्ति का अर्थ कल्याण भी है अतः कल्याणकारी होने से भैरव शान्तिदः हैं।

६८) शुद्धः - माया तथा उसके कार्य से अलिप्त होने से भैरव को शुद्ध कहा है। अथवा पञ्च कोशात्मक आवरण एवं गुणों से अतीत होने के कारण भगवान् भैरव शुद्ध नाम से अभिहित हैं।

६९) शङ्करप्रियबान्धवः - जो शङ्कर के प्रिय बन्धु हैं अथवा कल्याणकारी शङ्कर जिनके प्रियबन्धु हैं।

७०) अष्टमूर्तिः - जो आठ मूर्तियों में प्रकट हो रहा है। सूर्य, सोम, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी तथा आत्मा यह आठ मूर्तिभां हैं।

७१) निधीशः - अपार सम्पत्ति का स्वामी कुबेर।

७२) ज्ञानचक्षुः - समस्त विश्व का बोध ही जिसके ज्ञान चक्षु हैं।

७३) तपोमयः - तप अर्थात् ऐश्वर्य से युक्त। अथवा वाक्, काय, मन इन्द्रियों का नियामक तपस्वी।

\* सिद्धः (सिद्धियों से युक्त) इति पाठान्तरः।



अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।

भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः॥१०॥

७४) अष्टाधारः - जो आठ इन्द्र आदि लोकपाल देवताओं का आधार है, अथवा अद्वैत दृष्टि से आत्मरूप से प्रकृति, महत्, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रस, रूप एवं गन्ध का आशय होने से भैरव अष्टाधार नाम से अभिहित हैं। अथवा मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, सहस्रार, विष्णुवक्त्र आठ स्थानों के आधार के रूप होने से भैरव अष्टाधार कहे गये हैं अथवा विराट् रूप होने से जो सूर्य, सोम आदि आठ मूर्तियों के आश्रयभूत हैं।

७५) षडाधारः - जो षट् शास्त्रों के वर्णमाला के रूप में आधार है अथवा मूल, लिङ्ग, नाभि, हृदय, कण्ठ तथा भूमध्य जिस के आधार हैं वह भैरव षडाधार नाम से प्रसिद्ध है।

७६) सर्पयुक्तः - आभूषण के रूप में सर्पों से सुशोभित हैं। अथवा संसार रूपी सर्प लय अवस्था में जिसके अन्तः में अन्तर्हित रहता है। अतः भैरव सर्पयुक्त कहा जाता है अथवा पाठान्तर में सर्प युक्त है। यहाँ भी वह संसार रूपी सर्प से मुक्त अर्थात् अलिप्त है। श्रीमद्भागवत में भी संसार को सर्प का रूप कहा है - 'संसार सर्प दष्टं यो विष्णुरातिमममुचत' अर्थात् संसार रूपी सर्प से डसे हुए परीक्षित को शुकदेव ने मुक्त किया।

७७) शिखीसखः - शिखी अर्थात् अग्नि का सखा वायु रूप होने से भैरव का शिखीसखा नाम है।

७८) भूधरः - पृथ्वी को धारण करने वाले भैरव।

७९) भूधराधीशः - भूधर अर्थात् पर्वतों का अधीश।

८०) भूपतिः - पृथ्वी के स्वामी।

८१) भूधरात्मजः - भगवान् शिव का नाम भूधर है अतः भैरव उनके पुत्र के रूप में कहे जाते हैं। अथवा पाठान्तर में भूधरात्मक है इसका अर्थ है शिव-रूप।

कङ्कालधारी मुण्डी च \*\*आन्त्रयज्ञोपवीतकः।

जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा॥११॥

८२) कङ्कालधारी - कंकाल एक शस्त्र विशेष का नाम है अतः

\*\* नागयज्ञोपवीतकः (सर्परूपी यज्ञसूत्र धारण करनेवाले) इति पाठान्तरः।

कंकालधारी वह कहा जाता है जो कंकाल नामक शस्त्र विशेष को धारण करता है। अथवा अस्थिपञ्जर का नाम कङ्काल है, अतः जो अस्थि पञ्जर धारण करता है वह भैरव कङ्कालधारी है।

८३) मुण्डी - जो मुण्डों की माला पहिनता है।

८४) आन्त्र यज्ञोपवीतकः - अन्यत इत्यान्त्रं ज्ञानं तदेव यज्ञो येषां ते - आन्त्रयज्ञाः तैरुपवीयते इति आन्त्रयज्ञोपवीतकः। अर्थात् जो ज्ञानयज्ञ के द्वारा प्राप्य है। भगवान् भैरव को ज्ञान के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है अतः इनका नाम आन्त्रयज्ञोपवीतक है।

८५) जृम्भणः - जृम्भते अर्थात् जो सृष्टि के समय प्रपञ्च रूप में प्रसरित होता है अथवा जृम्भण का अर्थ मुख को फैलाना भी है। अतः प्रलय के समय जम्भाई के रूप में यह मुख का विस्तार करते हैं जिससे समस्त जगत् इनके मुख में प्रवेश कर जाता है।

८६) मोहनः - सब को मोहित करने वाले। 'मोहो धर्म विमूढत्वं' धर्म के विषय में मूढता। भगवान् भैरव पाश से जीव के बन्धनकर्ता भी हैं, पाश निवृत्ति से मोक्षदाता भी हैं। रव अर्थात् शब्द से ही वर्णों का स्वरूप प्रकट होता है। अ से ह पर्यन्त वर्णों से ही ज्ञान की उत्पत्ति होती है। यह ज्ञान दो प्रकार का है - १) संसार आत्मक ज्ञान, जिससे जीव बन्धन को प्राप्त होता है अतः भैरव को मोहन नाम से व्यवहृत किया जाता है। २) दूसरा प्रकार लय कारक ज्ञान है जिससे चित्त का लय होने से भैरव मोक्षदाता भी हैं। चिद्विलास नामक ग्रन्थ के भाष्य में पीताम्बरा पीठस्थ स्वामी जी महाराज 'पाशभिदुरः स भैरव' का अर्थ करते समय यह प्रकट किया है।

८७) स्तम्भी - जो दुःखों का स्तम्भन करने वाला है।

८८) मारणः - जो पापियों को मारता है उसका नाम मारणः है।

८९) क्षोभणः - जो दुष्टों के संहार के लिये क्षोभ करता है अथवा सर्ग के समय प्रकृति एवं पुरुष के अन्तः में प्रवेश कर क्षोभ उत्पन्न करता है अतः भैरव को क्षोभण कहा गया है। कहा है -

प्रकृतिं पुरुषं चैव प्रविश्य स्वेच्छया हरः।

क्षोभयामास सम्प्राप्ते सर्गकाले व्यायाव्ययी।

शुद्धो नीलाञ्जनप्रख्यदेहो\* मुण्डविभूषितः।

बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोबाल पराक्रमः॥१२॥

\* दैत्यहा (दुष्टों का संहार करनेवाले) इति पाठान्तरः।



९०) शुद्धो - भक्तों के हृदय को शुद्ध करने वाला।

९१) नीलाञ्जनप्रख्यदेह - नीलाञ्जन के समान अर्थात् कज्जल के समान देहवाले अथवा शुद्ध त्रिगुणातीत राम के समान जिनकी देह है।

९२) मुण्डविभूषितः - नरमुण्डों से सुशोभित अथवा 'मुण्डा यतयः तेषां विभुः हरिः तस्मिन्नुषितः कृत निवास' - अर्थात् यतियों के आराध्य हरि भगवान के हृदय में निवासी ब्रह्मस्वरूप होने से अथवा गुरु रूप होने से भगवान भैरव का निवास हरि के हृदय में निरूपित किया गया है।

९३) बलिभुक् - बलि का अर्थ है 'पूजोपहार'। अर्थात् पूजा के समय अर्पित उपहार अतएव यज्ञ में दिये गये भाग विशेष का भोक्ता होने से भैरव को बलिभुक् कहा है।

९४) बलिभुङ्नाथः - बलि दिये गये भोजन का भक्षण करने वाले श्वान के स्वामी अथवा इन्द्र दिग्पाल आदि देवतागण यज्ञ में समर्पित बलि को ग्रहण करते हैं अतः बलि को भक्षण करने वाले देवताओं के स्वामी ऐसा अर्थ होता है। भैरव इन्द्र आदि देवताओं के भी नियामक हैं। श्री स्वामी जी महाराज ने कठोपनिषद् के द्वितीय अध्याय की तृतीय वल्ली के तीसरे मन्त्र के भाष्य में कहा है -

भयादस्य अग्निस्तपति भयात्तपति सूर्यः।  
भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः॥

प्रकाशात्मा देव अग्नि, सूर्य, इन्द्र, वायु आदि के नियामक है अतः इन दो मन्त्रों को भैरव भाव का प्रतिपादक कहा है। अतः बलिभुङ्नाथ अर्थात् बलि ग्रहणकर्ता इन्द्र आदि देवताओं के नियामक होने से भगवान भैरव को इस नाम से सम्बोधित किया है। अन्यत्र भी प्रमाण उपलब्ध हैं -

ब्रह्मविष्णुवादिकानाञ्च ब्रह्माण्डान्तरवासिनाम्।  
नित्यं नियामकस्त्वं हि भव भैरव सन्ततम्॥

अर्थात् ब्रह्मा-विष्णु आदि के नियन्त्रण की क्षमता भगवान भैरव में है।

९५) बालः - बाल शब्द का श्रीयुत वंशीधर जी ने तीन प्रकार से अर्थ किया है - १. बलन्ति चलन्ति दुष्टा यस्मात् अर्थात् जो दुष्टों का वारक है २. बलति आच्छादयति स्वपराक्रमेण अन्यान् - अर्थात् जो अपने पराक्रम से

दूसरों को परास्त कर देता है ३. बं अमृतं अलति पूरयति अर्थात् भक्तों को अमृत से परिपूरित करता है।

९६) बालपराक्रमः - बाल अर्थात् हरि के समान पराक्रमी अथवा बालपरैः पुत्रकामिभिः सेव्यते अर्थात् पुत्र की कामना करनेवाले भक्त जिनकी सेवा करते हैं।

सर्वापत्तारणो दूर्गो दुष्टभूत निषेवितः।

कामी कलानिधिः कान्तः कामिनीवशकृद्वशी॥१३॥

९७) सर्वापत्तारणः - समस्त आपत्तियों से तारने वाले।

९८) दुर्ग - अनेक प्रकार के क्लेशों की अनुभूति के पश्चात् जो प्राप्त होते हैं वह भैरव दुर्ग नाम से अभिहित हैं चिदात्मरूप भगवान् भैरव मन और वाणी से भी अगम्य हैं अतः इनको दुर्ग (दुःखेन गम्यते इति) कहा है।

९९) दुष्टभूतनिषेवितः - दुष्ट प्राणियों द्वारा भी जिनकी सेवा की जाती है।

१००) कामी - साधकों के मनोरथ को पूर्ण करने वाले। कं सुखं अमति प्रापयतीति सोऽस्यास्तीति कामी।

१०१) कलानिधिः - कला अर्थात् माया को शमन करने वाला। रक्षा, माया, गीतादि कर्म कला शब्द के अर्थ हैं। 'कला रक्षा, कला माया, कला गीतादि कर्मणि'। तन्त्र शास्त्र में क से प्रारम्भ कर ल वर्ण पर्यन्त वर्णों को प्रत्याहार न्याय से संक्षेप में कला कहा जाता है। कला से ही समस्त जगत् की अभिव्यक्ति होती है अतः वर्णमाला के अनुलोम एवं विलोम पाठ से सौ अक्षर एवं आठ वर्ग मिल कर १०८ होते हैं। भैरव का यही १०८ अक्षरों से निर्मित स्वरूप है अतः भैरव की १०८ संख्या है तदनुसार नाम भी हैं। यहाँ इस स्तोत्र में भी १०८ नामों की संख्या है अतएव भैरव को कलानिधि कहा है।

१०२) कान्त - अत्यन्त कमनीय।

१०३) कामिनीवशकृत् - काम्यते सर्वैः इति कामिनी लक्ष्मी इत्यर्थः तां लक्ष्मीं वशीकरोति। अर्थात् जिस की सब इच्छा करते हैं अर्थात् लक्ष्मी, उसको वश में करने में सक्षम। अर्थात् भक्तों को लक्ष्मी प्रदान करने वाले।

१०४) वशी - सब को नियन्त्रित रखने वाला।



श्रीमदापदुद्धारक बटुकभैरव स्तोत्रम्

३९

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः।

सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभुविष्णुरितीव हि॥१४॥

१०५) जगद्रक्षाकरः - संसार का रक्षक।

१०६) अनन्तः - जिसका कभी अन्त नहीं होता। व्यापक।

१०७) मायामन्त्रौषधीमय - जो माया, मन्त्र एवं औषधिमय है।

१०८) सर्वसिद्धिप्रदः - समाधि से उद्भूत समस्त सिद्धियों को देनेवाला।

१०९) वैद्यः - संसार-रोग से मुक्ति देने वाला।

११०) प्रभु - सब कुछ करने में समर्थ।

१११) विष्णु - सर्वत्र व्यापक।

व्याप्ते मे रोदसी पार्थ कान्तिश्चाभ्यधिका स्थिता।

क्रमणाच्चाप्यहं पार्थ विष्णुरित्यभिसंज्ञितः॥

□□□

## श्री बटुक भैरव दीपदान प्रयोग

हमारे सभी उपासना कर्मों में दीपदान का अति महत्त्व है। दीपदान के दो प्रकार हैं - १) पूजा पाठ आरम्भ करने के पूर्व २) पूजा पाठ के पश्चात्।  
वैसे कामना विशेष से दीपदान का स्वतन्त्र विधान भी है जिससे षट्कर्मों की सिद्धि, आपत्ति नाश आदि कर्म सफलता पूर्वक सम्पन्न किये जा सकते हैं। इस प्रयोग के लिये तिथि नक्षत्र सूर्यादिग्रहों का विचार आदि अपेक्षित नहीं हैं। यहाँ हम कामना विशेष से सम्बद्ध प्रयोग-विधि दे रहे हैं।

**दीपदान काल** - वसन्त, हेमन्त, शिशिर, वर्षा और शरद्।

**मास** - वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन।

**पक्ष** - शुक्ल पक्ष उत्तम, कृष्णपक्ष की पंचमी तक।

**तिथि** - प्रतिपदा, द्वितीया, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, द्वादशी, त्रयोदशी एवं पूर्णिमा।

**नक्षत्र** - रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, तीनों उत्तरा, हस्त, स्वाति, विशाखा, ज्येष्ठा और श्रवण।

**योग** - सौभाग्य, शोभन, प्रीति, सुकर्म, धृति, वृद्धि, हर्षण, व्यतीपात, और वैधृत।

**समय** - प्रातः, सायं, मध्यरात्रि व अन्य यज्ञकर्म की पूर्णाहुति से पूर्व।

**विशेष** - सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, संक्रान्ति, कृष्णाष्टमी, नवरात्रि, ज्येष्ठ शुक्लदशमी व सभी देवीपर्व।

**दीपदान सामग्री** - १. कपिला गोघृत २. आमला और इमली का चूर्ण ३. दीपपात्र (कामनानुसार) ४. कामनानुसार घृत अथवा तेल ५. बत्तियाँ ६. आधार यन्त्र ७. चावल ८. रक्त चंदन ९. रक्त पुष्प १०. लाल वस्त्र ११. पंचगव्य १२. शलाका १३. नारियल १४. बिल्वफल १५. चन्दन



१६. तांबे का कलश १७. सुपाडी १८. अष्टगंध १९. ऋतुफल २०. पंचमेवा  
 २१. रोली २२. सिन्दूर २३. नैवेद्य २४. खैर की ८ कीलें २५. खैर का ही दण्ड  
 २६. उडद के बडे २७. छुरी २८. ब्राह्मण वरण सामग्री २९. दक्षिणा ३०. लगे  
 हुये पान ३१. गुग्गुल ३२. इत्र ३३. कार्यानुसार पंचधान्य  
 ३४. कर्मानुसार पायस, मोदक, गुड़, घी, गेहूं का आटा, दधि, शक्कर, चना।

### पात्रस्य धातुमानम्

सौवर्णं सिद्धिदं पात्रं वश्ये रौप्यं प्रकल्पयेत्।  
 विद्वेषणकरं लौहं मारणे मृण्मयं तथा॥  
 उच्चाटनकरं कांस्यं मोहे पित्तलजं स्मृतम्।  
 अत्रोक्तं सर्वकार्येषु सर्वाभावे तु ताम्रजम्॥

### सूत्र मानम्

श्वेत शान्तौ तथा पीतं स्तम्भे वश्ये तु रक्तकम्।  
 मांजिष्ठ द्वेषणे प्रोक्तं मारणे कृष्णसूत्रकम्॥  
 सर्वाभावे महादेवि श्वेतसूत्रं प्रशस्यते॥

### वर्तिमानम्

एकापंच तथा सप्त एकविंशति संख्यया।  
 अयुग्माथ प्रकर्तव्या युग्मां नैव तु कारयेत्॥  
 वर्तिरेका प्रकर्तव्या त्रिस्रो वा वर्तयस्तथा॥

### घृत तैल मानम्

गोघृते सर्वसिद्धिः स्यान्माहिषं मारणे स्मृतम्।  
 उष्ट्रीयं द्वेषणे प्रोक्तं गाडरं शान्तिकर्मणि॥  
 अजामुच्चाटने कार्यं सर्वाभावे च गोघृतम्।  
 घृताभावे भवेत्तैलं दीपदाने विशेषतः॥  
 घृतेनदीपो दातव्यस्तिलतैलेन वा पुनः।  
 वसामेदोद्भवं तैलं प्रयत्नेन विवर्जयेत्॥

## पात्र मानम्

विंशत्पलमितं पात्रं बुध्नोच्छ्राये षडङ्गुलम्।  
 विस्तारे अङ्गुलान्येव षोडशं परिकीर्तितम्॥  
 षष्टिपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये नवाङ्गुलम्।  
 अङ्गुलानि चतुर्विंशदायामे परिकल्पयेत्॥  
 पञ्चसप्ततिमे तैले सर्वशत्रु विनाशनम्।  
 द्विपञ्चाशत्पले पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु षष्टिमत्॥  
 शतपलमिते तैलं दीपाद्वैरि विनाशनम्।  
 पञ्चाशत्पल गव्यं च वश्ये चौर्यादि कर्मणि॥  
 त्रिंशदशपले पात्रे मानं तद्वत्प्रकीर्तितम्।  
 शतपलमिते पात्रे उच्छ्रायो द्वादशाङ्गुलः॥  
 द्वित्रिंशच्चैव आयामे तन्मध्ये तु सहस्रकम्।  
 सर्वं कर्मणि सिद्धिः स्याद्दीपे पल सहस्रके॥  
 सप्तादशतपात्रे च पञ्चोत्तर शताधिके।  
 पञ्चदशाङ्गुलोच्छ्रायं व्यायामे षट्कत्रिंशके॥  
 अयुतपलदीपश्च निगडाद्वन्दि मुक्तये।  
 सहस्रपलदीपे च वन्दिमोक्षः प्रजायते॥  
 त्रिंशत्पलमिते पात्रे मान्यं चैव तु पूर्ववत्।  
 त्रिंशत्पलमिते तैले दिनान्येकोनविंशतिः॥  
 कन्याभिकाङ्क्षी तैलेन प्रत्यहं दीपमाचरेत्।  
 ईप्सितां लभते कन्यां भैरवस्य प्रसादतः॥  
 नृपपलमिते पात्रे उच्छ्रायं च रसाङ्गुलम्।  
 विंशत्पलमिते दीपे प्रत्यहं विंशतिर्दिनम्॥  
 सर्वरोगविनाशाय क्षयापस्मार दारुणे।  
 दशपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु त्रिंशतम्॥  
 दशपलमितं तैलं प्रत्यहं सप्त वासरे।  
 राजवश्यकरं क्षिप्रं यदि साक्षाज्जगत्पतिः॥  
 त्रिंशत्पलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु पूर्ववत्।  
 त्रिंशत्पलमिते तैले क्षुद्ररोग विनाशकृत्॥



एकादशमिते तैले उच्छ्राये तु षडङ्गुलम्।  
 पञ्चविंशत्पले तैले दीपे भूतादिनाशनम्॥  
 एकादशपलेपात्रे बुध्नोच्छ्रायं तु पूर्ववत्।  
 नृपपलमिते तैले ग्रहपीडा निवारणम्॥  
 शतपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु षोडश।  
 व्यायायं तु भवेत्सार्द्धं चतुर्विंशतिरङ्गुलैः॥  
 तन्मध्ये च प्रकर्तव्यो दीपः शतत्रयात्मकः।  
 सिंहव्याघ्रादिसर्पाणां भयं नैव प्रजायते॥  
 एकादशपले पात्रे उच्छ्रायं चैव पूर्ववत्।  
 अष्टपल घृतो दीपो यात्राकाले प्रकल्पयेत्॥  
 तस्य मार्गे भयं नास्ति स्वस्थश्च गृहमाप्नुयात्।  
 त्रिंशत्पलमिते पात्रे व्यायामे चैव पूर्ववत्॥  
 शतपलमिते दीपे मेधारोग्य विवर्धनम्।  
 नित्यदीप प्रमाणे तु पात्रं पलत्रयं स्मृतम्॥  
 बुध्नोच्छ्राये भवेत्सार्द्धमङ्गुलोदरमध्यगः।  
 तन्मध्ये तु भवेत्तैलं यथा कामनया सुधीः॥  
 पलमात्रं पलार्धं वा दीपं प्रज्वालयेत्सुधीः।  
 अङ्गुलोदर चत्वारि व्यायामः परिकीर्तितः॥  
 एका वर्तिः प्रकर्तव्या एकविंशतितत्तुभिः।  
 पात्रे मध्ये मण्डलं तु कुर्याद्वा साधकोत्तमः॥  
 षट्कोणान्तस्त्रिकोणस्थां मध्ये मायां प्रकल्पयेत्।  
 तन्मध्ये च भवेद्वर्तिस्ततो दीपं प्रकल्पयेत्॥  
 भूतशुद्धिः प्रतिष्ठा च ऋष्यादि च षडङ्गुलम्।  
 मातृकान्यास पूर्व हि ततो बलिं समुद्धरेत्॥  
 आवरणार्चनकं कुर्यान्मध्ये देवं प्रपूजयेत्।  
 दिक्पालांलोकपालांश्च समग्र परिवारितः॥  
 सवाहनां सायुधांश्च पत्नीपुत्रादिभिर्युताम्।  
 अपसर्पण पूर्व ही सर्वत्र पूजनं चरेत्॥

धूप दीपादि नैवेद्यैस्ताम्बूलारार्तिकादिभिः।  
 यदक्षरपदेनैव सर्वपापं क्षमस्व मे॥  
 कवचं स्तवराजं च दीपाग्रे प्रपठेत्सुधीः।  
 ततो मन्त्रजपं कुर्याद्देवताय समर्पयेत्॥  
 यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।  
 स्तवराजं शतेनैव फलमाप्नोति मानवः॥  
 स्तवराजसहस्रेण लभेद्वै वाञ्छितं फलम्।  
 एकादश सहस्रेण तस्य सिद्धिरनेकधा॥  
 सम्पुटस्तवराजेन मन्त्रस्याष्टोत्तरं शतम्।  
 पुरश्चरणं तु यः कुर्यादिकादश सहस्रकं॥  
 यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति मानवः।  
 होमादौ च जपादौ च बलिदानं प्रकल्पयेत्॥  
 होमान्ते च जपान्ते च बलिद्वयं सुसिद्धिदम्॥

### रुद्रयामले विशेषः

बिन्दु त्रिकोणं षट्कोणं वृत्ताष्टदलकं तथा।  
 दलानिषोडशान्येव चतुरस्रं ततः परम्॥  
 एवं यंत्रं समालिख्य तत्र सम्पूज्य देवताः।  
 तस्योपरि दीपपात्रं च स्थापयेत्साधकोत्तमः॥  
 तैलं घृतं वा वर्ति च स्थाप्य दीपं प्रबोधयेत्।  
 तैलवर्ति स्थापने तु इमं मन्त्रम् समुच्चेरेत्॥

ॐ नमो भगवते बटुकभैरवाय देवीपुत्राय सर्वदुष्टजन मुखस्तम्भं कुरु कुरु

ॐ ह्रां ह्रीं हूं ठः ठः ठः हुं फट् स्वाहा॥

इत्यनेनाष्टवारं तदभिमन्त्र्य निधापयेत्।  
 मूल मन्त्रेण तं दीपं ततः प्रज्वालयेत्सुधीः॥  
 दीपार्पणे तु यो मन्त्रः स तु पूर्वमुदीरितः।  
 त्रिवारं तं समुच्चार्य देवाय दीपमर्पयेत्॥  
 मूलमंत्रं ततः किञ्चिज्जप्त्वा बलिं समर्पयेत्।  
 मासान्नं मासभक्तं वा पात्रे चैव सदीपकम्॥



पायसात्रं मोदकं च चणकादीनि निक्षिपेत्।  
 शंखोदकेन सम्प्रोक्ष्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य च॥  
 अमृतीकरणं कृत्वा गंधादिभिश्च पूजयेत्।  
 बलिनिवेदनं मन्त्रम् त्रिवारं च पठेन्नरः॥  
 बलिपात्रस्याधोभागे त्रिकोणं रसकोणकम्।  
 चतुरस्रं मण्डलं वै कृत्वा पात्रं निधापयेत्॥

### बलि निवेदन मन्त्रः

ॐ ह्रीं बटुकनाथ देवीपुत्र कपिलजटाभारलसद्भास्वर त्रिनेत्र  
 ज्वालामुखरित सर्वविघ्नान्निवारय निवारय सर्वजन वशमानय वशमानय  
 सकलशत्रुच्छंदोनिबद्धां वाणीं मे कुरु कुरु इमं यथोपकल्पितं बलिं गृह्ण गृह्ण  
 ईं ब्रां ब्रीं ब्रूं ब्लं ब्लां ब्लूं बलिं गृह्ण गृह्ण सिद्धिं देहि देहि हुं फट् स्वाहा॥

तस्मिन्दीपे महेशानि ध्यात्वा बटुक भैरवम्।  
 छुरिका स्थापनं कृत्वा बलिदानं समाचरेत्॥  
 दीपाग्रे त्वशुभां वाणीं पतितस्य च दर्शनम्।  
 अस्पर्शानिष्टवचनमधोवातः विसर्जनम्॥  
 वर्जयेच्च प्रयत्नेन सावधानः सदा शुचिः।  
 मार्जारमूषकादिभ्यो जन्तुभ्यः साधकोत्तमः॥  
 दीपरक्षां प्रकुर्वीत नोचेदापदमाप्नुयात्।  
 अथ पुष्पाञ्जलिं दद्यान्मन्त्रेणानेन पार्वति॥  
 अनेन दीपवर्येण पश्चिमाभिमुखेन च।  
 यथाविधि कृतेनात्र पूर्णाः सन्तु मनोरथाः॥  
 इत्थं सम्पूज्य विविधतर्पणमेच्च कृताञ्जलिः।  
 इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात्साधकोत्तम सिद्धिदम्॥  
 शृणु देवि प्रवक्ष्यामि महादीप विधिं शुभम्।  
 अभिचारे त्रयं कुर्याद्दक्षिणोत्तर पश्चिमे॥  
 पुष्पवासित तैलं च सर्वकाम फलप्रदम्।  
 तिलतैलं श्रियोहेतुः पथिकागमनं प्रति॥

अलसी तैलमुद्रिदष्टं वश्य कर्मणि निश्चितम्।  
 सर्षपं रोगनाशाय मारणे राजिकोद्भवम्॥  
 उच्चाटने करओत्थं विद्वेषे मधुवृक्षजम्।  
 गोघृते कृते दीपे देवतां वशमानयेत्॥

### अथ पात्र मानम्

गोधूमाश्च तिला माषा मुद्गाश्च तंडुलाः क्रमात्।  
 पञ्चधान्यमिदं प्रोक्तं सर्वदा दीप दापने॥

वश्ये तण्डुलपिष्टोत्थं मारणे माषपिष्टजम्।  
 तिलपिष्टं समुद्धूतमुच्चाटन विधौ स्मृतम्॥  
 प्रियस्यागमने प्रोक्तं गोधूमोत्थं सतण्डुलम्।  
 मोहने मुद्गजं प्रोक्तं पात्रं द्रव्यमनुक्रमात्॥

सौवर्णं राजसं वापि ताम्रजं वापि शक्तितः।  
 पलत्रयमितं देवि नित्यं दीपे प्रकीर्तितं॥

शतसंख्ये महादीपे पात्रे युग्मशरैः स्मृतम्।  
 सहस्रपल दीपे तु पात्रं शतपलैः स्मृतम्॥

घृतायुतपले पात्रं स्मृतं पञ्चशतैः कृतम्।  
 तत्तत्कार्यं विभेदेन पात्रं कुर्याद्यथाविधिः॥

वश्ये भये विषादे च शस्त्र संग्राम संकटे।  
 द्यूते सैन्ये स्तम्भने च विद्वेषोच्चाटनमारणे॥

मयोक्तं विधिना दीपः कर्तव्यो भैरवस्य तु।  
 पश्चिमाभिमुखः स्थाप्यो महादीपो महेश्वरि॥  
 साधयेत्सर्वकार्याणि साधकस्य न संशयः॥

### वार परत्वेन बलिदानम्

रविवारे पायसान्नं सोमवारे च मोदकम्।  
 भौमे गुडाज्यं गोधूमा बुधे च दधिशर्करः॥  
 गोधूमं पूरिका युक्ता घृतमध्ये सुपाचिताः।  
 गुरौ चणकं खण्डाज्यं केवलं चणकं भृगौ॥



शनौ माषान्नतैलं च इति वारवलिः क्रमात्॥  
 दीपं प्रज्ज्वालय देवेशि बटुकाय बलिं हरेत्॥  
 त्रिराचम्य च मन्त्रैश्च हस्तं प्रक्षाल्य वै तदा॥  
 हस्ते जलं ततो गृह्यं विनियोगं पठेत्त्रिये॥  
 ततोऽन्यासं प्रकुर्वीत ध्यानं कुर्यात्ततः परम्॥

### राजसध्यानम्

उद्यत्सूर्य सहस्राभं त्रिनेत्र चन्द्रशेखरम्॥  
 रक्तांगरागमारक्तं माल्याम्बर विभूषितं॥  
 स्मेराननं नीलकण्ठं नानाभरण भूषितं॥  
 दक्षिणोर्ध्वकरे शूलम् तदधो वरमद्रिजे॥  
 वामोर्ध्वहस्ते देवेशि कपालं तदधोऽभयं॥  
 दधानं संस्मरेद्देवं स्मर्तुणामभयंकरं (प्रदं)॥  
 काम्य कर्मसु देवेशि ध्यायेद्देवं प्रभुं सदा॥

### तामसध्यानम्

अंजनाचल संकाशं मुण्डमाला विभूषितम्॥  
 चन्द्रखण्ड लसत्पिङ्ग केशभारं दिगम्बरम्॥  
 त्रिनेत्रं दक्षिणैहस्तैर्दमरुं च सृणिं तथा॥  
 खड्ग शूलं च देवेशि दधानमपरैः करैः॥  
 अभयं नागपाशं च घण्टां चैव कपालकम्॥  
 ऊर्ध्वादिक्रमतो देवि भीमदंष्ट्रं भयानकम्॥  
 सर्वाभरणसंदीप्तं मणिनूपुर मण्डितम्॥  
 किंकिणीजालसंयुक्तं व्यायेत्बटुक भैरवम्॥

सात्विकध्यान - अपमृत्युनिवारण, आयु-आरोग्य जनन, अपवर्गफल।

राजसध्यान - धर्म-अर्थ-कामप्रद।

तामसध्यान - शत्रुक्षयकारक, भूत प्रेतादि कृत्या अपस्मार नाशक होता है।

निगडैर्वन्धने प्राप्ते राजसंकट भाग्भवेत्।  
 सर्षपं तैलमापूर्य दीपं प्रज्वालयेत्सुधीः॥  
 वर्तिमेकादशशतैः कृत्वा तु तन्तुभिः शुभैः।  
 सहस्रावर्तनं कृत्वा राजभूषां लभेदिह॥  
 शृङ्खला मोचनं सद्यो भवतीति सुनिश्चितम्।  
 कौसुम्भं च सुरक्तं च पीतं वा कृष्णमेव वा॥  
 श्वेतं सर्वार्थदं प्रोक्तमन्यत्काम फलप्रदम्।  
 कौसुम्भं वश्य कार्याय सुरक्तं प्रीतये सदा॥  
 महिमावृद्धये पीतं कृष्णं स्यादभिचारके।  
 गौरधेनुघृतेनैव आयुष्यस्याभिवृद्धये॥  
 शततन्तुमितावर्ति कृत्वा दीपं पठेदिह।  
 विनौषधं विनावैद्यं रोगश्च नाशमाप्नुयात्॥  
 चंपकस्य च तैलेन दीपो भवति वश्यकृत।  
 मल्लिकातैलदीपेन राजा संयाति वश्यताम्॥  
 महिषेण घृतेनेह शत्रुनाशो भवेत् ध्रुवम्।  
 अजाघृतस्यदीपेन शत्रुभंगो भवेदिह॥  
 निर्गुण्डीतैलदीपेन शत्रुसेना पराङ्मुखी।  
 एरण्डीतैलदीपेन भोगवाजायते नरः॥  
 जातीतैलेन दीपेन राजमान्यो भवेच्छुभः।  
 कपिलाया घृतेनैव भोगवान् जायते नरः॥

### दीपदान प्रयोग

तत्रात्मनो यजमानस्य चन्द्रतारानुकूले शुभेऽहि तिथि वासर लग्नेषु  
 त्वरितकार्यं चेदमृतघटीषु शुभहोरायां वा दीपारम्भं कुर्यात्स च ग्रहणे संक्रान्तौ  
 कृष्णाष्टम्यां दुर्गोत्सवेऽर्धोदयादि महापर्वसु कृतस्तात्कालिक महाफलदो भवति।

दीपदान संभार - कपिला गोमयं चिंचाद्याम्लद्रव्यं यथा कामनया  
 दीपपात्रं प्रयोक्तव्यं तैलं वा यथोक्त वर्तया शीघ्रकार्ये पात्रपल ६४, द्रव्यपल  
 १०८, तन्तु १०००। द्वितीय पक्षे पात्रपल ३२, द्रव्यपल ८८, तन्तु ३००।  
 मध्यम प्रकारे पात्रपल १६, द्रव्यपल २८, तन्तु १००। कनिष्ठ पक्षे पात्रपल ८,



द्रव्यपल ८, तन्तु १६। नित्यदीपे पात्रपल ३, द्रव्यपल १, तन्तु २१।

शुभे - दीपमुखे उत्तरे, साधकः पूर्वाभिमुखः, आधारयन्त्रमुख उत्तरे।

अशुभे - दीपयन्त्रसाधकानां मुखं दक्षिणे।

नित्ये - षडंगुलानि ६ कीलानि।

नैमित्तिके - द्वादशांगुलानि कीलानि।

दीपाग्रे प्रथम कील पूजनम् दक्षिणावर्तं। दीपिका ८ कीलं प्रत्येकस्यामेकम्। वशीकरणे, मोहने ३ शुभावहाः। मारणोच्चाटने विद्वेषे ४।

### अन्य पूर्वोक्त सामग्री

तत्र शकुनानि निरीक्ष्य, दीपदानात् पूर्वदिने सामग्रीं सम्पाद्य आचार्यो यजमानश्च एक भक्तं कृत्वाऽपरदिने कृतोपवासो भूमौ स्वपेत्। अपरेद्युः दीपदान दिने ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय गुरुं गणपतिं स्मृत्वा आवश्यकं निर्वर्त्य दन्तानसंशोध्य आचम्य आदौ गणपति पूजनं कृत्वा अर्धसम्पुटं कृत्वा -

‘अद्येत्यादि मम यजमानस्य वा सकलमनोरथसिद्धये प्रयोगानुसारेण अमुक दिनपर्यन्तं अमुक संख्यामानेन पात्रेण घृतेन तैलेन वा अमुकसंख्याभिर्वर्तिकाभिः श्री बटुकभैरव प्रीत्यर्थं दीपदानं कर्तुं ममेप्सित फलावाप्त्यै आचार्य त्वामहं वृणे’ इति वृत्वा वस्त्राभूषणानि निवेद्य दक्षिणां दत्त्वा -

‘भक्त्या समागतोऽहं ते पादयोर्भक्त वत्सल।

दीपकार्यं च भवता सम्पाद्यं वै नमोनमः॥’

इति मन्त्रेण दण्डवन्नमस्कृत्य अन्यास्त्रीन्यंच सप्त नवैकादश वा ब्राह्मणान्वृणुयात्। तैर्ब्राह्मणैः सह पुण्याहवाचनादीनि नान्दीश्रान्तादि कृत्वा पश्चात्तैर्ब्राह्मणैः सहाचार्यो भूशुद्धि भूतशुद्धि प्राणप्रतिष्ठान्तं मातृका बहिर्मातृकान्यासान्मूल मन्त्रस्य ऋष्यादिन्यास करषडङ्गन्यास अङ्गन्यास पदन्यास अक्षरन्यास एकादशन्यास पीठन्यासादीन्पद्धत्युक्तमार्गेण कृत्वा सपादहस्तां समन्तचतुरस्त्रां चतुरंगुलोच्चां दीपवेदीं शोधितस्थले निर्माय कपिला गोमयेनोपलिप्य तत्र रक्तचन्दनेन विन्दु त्रिकोण षट्कोणवृत्ताष्टदल चतुर्द्वार युतं यंत्रं विलिख्य ततो दीपवेदिकाग्रे कलशं संस्थाप्य तन्दुलेनाष्टदलं कृत्वा तदुपरि कलशं संस्थाप्य पूजयेत्। पूर्णपात्रोपरि पूजायंत्रं मध्ये सुवर्णरचितं मूर्ति

आग्नेये - पूर्ववत् अर्धो सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं अर्धो भैरवाय नमः नमः  
इति मन्त्रो मायाय यति गुरु गुरु मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्यादा ॐ ह्रीं  
अर्धो भैरवाय नमः' इति यति दत्त्वा -



दक्षिणे - पूर्ववत् चामीकरं सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं चामीकर भैरव एहि एहि इमं सदीपं माषात्रवलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॐ ह्रीं चामीकर भैरवाय नमः' इति वलिं दत्त्वा -

नैऋत्ये -- पूर्ववदसितांगं सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं असितांग भैरव एहि एहि इमं सदीपं माषात्र बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॐ ह्रीं असिताङ्ग भैरवाय नमः' इति बलिं दत्त्वा -

पश्चिमे - पूर्ववत् भीषणं सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं भीषण भैरव एहि एहि इमं सदीपं माषात्र वलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॐ ह्रीं भीषण भैरवाय नमः' इति वलिं दत्त्वा -

वायव्ये - पूर्ववत् प्रचण्डं सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं प्रचण्ड भैरव एहि एहि इमं सदीपं माषात्रवलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॐ ह्रीं प्रचण्ड भैरवाय नमः' इति बलिं दत्त्वा -

उत्तरे - पूर्ववत् कराल भैरवं सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं कराल भैरव एहि एहि इमं सदीपं माषात्रवलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॐ ह्रीं कराल भैरवाय नमः' इति बलिं दत्त्वा -

ईशाने - पूर्ववत् कपालभैरवं सम्पूज्य - 'ॐ ह्रीं कपालभैरव एहि एहि इमं सदीपं माषात्रवलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॐ ह्रीं कपाल भैरवाय नमः' इति बलिं दत्त्वा - इत्यष्ट दिक्षुबलिदानेन सम्पूज्य गुरुभ्यो नमः परम गुरुभ्यो नमः परात्परगुरुभ्यो नमः परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः ग्लौं गणपतये नमः क्षौं स्थान क्षेत्रपालाय नमः इति नत्वा रक्तचन्दनेन ताम्रपत्रोपरि दीपयंत्रं लिखेत्। त्रिकोणं षट्कोणं चतुरस्रं ताम्रपत्रोत्कीर्णं वा तत्र संस्थाप्य रक्तचन्दनाक्तैस्तण्डुलैः पूरयित्वा तत्र पीठशक्तिं पूजयेत्।

ॐ मण्डूकाय नमः ॐ कालाग्निरुद्राय नमः ॐ मूल प्रकृत्यै नमः ॐ आधार शक्त्यै नमः ॐ कूर्माय नमः ॐ अनन्ताय नमः ॐ पृथिव्यै नमः ॐ सुधांबुधये नमः ॐ मणिद्वीपाय नमः ॐ चिन्तामणि गृहाय नमः ॐ श्मशानाय नमः ॐ पारिजाताय नमः ॐ रक्त वेदिकायै नमः ॐ मणिद्वीपाय नमः ॐ धर्माय नमः ॐ ज्ञानाय नमः ॐ वैराज्ञाय नमः ॐ ऐश्वर्याय नमः ॐ अधर्माय नमः ॐ अज्ञानाय नमः ॐ अवैराग्याय नमः ॐ अनैश्वर्याय नमः ॐ आनन्दकन्दाय नमः ॐ संवित्रालाय नमः ॐ पद्माय नमः ॐ प्रकृति मय पत्रेभ्यो नमः ॐ विकारमय केसरेभ्यो नमः ॐ पंचाशद्वर्ण वीजाढ्य

कर्णिकायै नमः ॐ अं द्वादश कलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः ॐ ऊं षोडश कलात्मने सोममण्डलाय नमः ॐ मं दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः ॐ सं सत्वाय नमः ॐ रं रजसे नमः ॐ तं तमसे नमः ॐ आं आत्मने नमः ॐ अं अन्तरात्मने नमः ॐ पं परमात्मने नमः ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ॐ ह्रीं परतत्वांत पीठदेवताभ्यो नमः ॐ वामायै नमः ॐ ज्येष्ठायै नमः ॐ रौद्रायै नमः ॐ काल्यै नमः ॐ वलविकरण्यै नमः ॐ बलप्रमथिन्यै नमः ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः ॐ मनोन्मन्यै नमः ॐ नमो भगवते सकलगुणात्म शक्ति युक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः इति पीठं सम्पूज्य -

ततः षट्कोणे -

हां बां हृदयाय नमः हृदयं पूजयामि,  
 हीं बीं शिरसे नमः शिरं पूजयामि,  
 हूं बूं शिखायै नमः शिखां पूजयामि,  
 हैं बैं कवचाय नमः कवचं पूजयामि,  
 हौं बौं नेत्रत्रयाय नमः नेत्रत्रयं पूजयामि,  
 हः बः अस्त्राय नमः अस्त्रं पूजयामि।

इति सम्पूज्य तत्र यथा कामनया कृतं स्वर्णदि दीप पात्रं संस्थाप्य गायत्री मंत्रेण गोघृतं तिलादि तैलं वा सम्पूर्य तत्र गायत्री मंत्रेण यथा कामना संख्यवर्ति निधाय। तन्तु संख्या यावन्तास्तावद्भि मंत्रावृत्तिभिरभिमन्त्र्य मूल मंत्रेण दीपानुरूपां शलाकां निधाय दक्षिणधरां छुरिकां निखाय -

ॐ ह्रीं छीं छुरिके मम शत्रुच्छेदिनि रिपून् निर्दलय निर्दलय मां पाहि पाहि स्वाहा। इति छुरिकां सम्पूज्य ॐ हां ह्रीं सर्वाङ्ग सुन्दर्यै शलाकायै नमः इति शलाकां सम्पूज्य पूर्वसंस्थां वा उत्तर संस्थां वा पश्चिम संस्थां वा शुभकार्ये अशुभे दक्षिण संस्था वर्ति निधाय अद्येत्यादि अमुक कामना सिद्धये दीपदानं करिष्ये इति संकल्प्य मूलेन गायत्री मंत्रेण वा दीपं प्रज्ज्वलयेत्। ततः पूर्ववत् ऋष्यादि षडङ्गन्यासं कृत्वा दीपं संकल्पयेत्। तत्र मंत्र -

ॐ ह्रीं ऐं श्रीं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञाय प्रचण्डपराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं गृहाण सर्वकार्याणि साधय साधय सर्वदुष्टान्नाशाय नाशाय त्रासय त्रासय सर्वतो मम रक्षां कुरु कुरु हुं फट् स्वाहा।।

इति मंत्रेण अक्षत चन्दन पुष्प संहितं जलं दीपाग्रे निक्षिपेत्। पुनर्दक्षहस्ते जलमादाय -



गृहाण दीपं देवेश बटुकेश महाप्रभो।

ममाभीष्टं कुरु क्षिप्रमापद्भ्यो मां समुद्धर॥

मूलमुच्चार्य बटुकाय इमं दीपं निवेदयामि नमः इति जलं भूमौ निक्षिपेत् ततो दीपस्य प्राणप्रतिष्ठा कुर्यात्।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं ह्रां हंसः ह्रां अस्य दीपस्य प्राणाः इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों जीव इहस्थितः ॐ आं ह्रीं क्रों सर्वेन्द्रियाणि स्थितानि इहागत्यसुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। इति प्राण प्रतिष्ठां कृत्वा दीपे वटुकमाबाह्य तथा कामनया ध्यात्वा आवाहनादि मुद्राः प्रदर्श्य मूलेन पञ्चोपचारैः सम्पूज्य आवरण पूजां कुर्यात्। पुनर्मूलेन पञ्चोपचारैः बटुकं सम्पूज्य वलिं दद्यात्। दीपस्य वामभागे त्रिकोण वृत्त षट्कोण मण्डलंकृत्वा वलिमण्डलाय नमः इति गंधाक्षतेः सम्पूज्य तत्राधारं संस्थाप्य तत्र क्षत्रियादिभिः समांसो बलिं देय। शाल्योदन शर्करा लाजाचूर्ण गुड अपूप शङ्कुलीसमूह सूप पायसान्नादिघृतप्लुतमनेक जातीयं वलिद्रव्यं त्रिमधुयुतं (घृत मधु शर्करा) मोदक माषवटकानि विविध भक्ष्य द्रव्याणि वा यथा संभवं माष मुद्गात्रप्रधान वलि द्रव्यं संस्थाप्य बलि द्रव्योपरि घृतं रक्तपुष्पं पिष्टदीपं च संस्थाप्य आचम्य मूलेन प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य अमुकफलावाप्तये श्री बटुक भैरव प्रीतये अमुक द्रव्येण बलिदानमहं करिष्ये इति संकल्प्य बं बटुकाय नमः इति मंत्रेण गंधाक्षतपुष्पैः बलिद्रव्यं सम्पूज्य वाम करांगुष्ठेनावष्टभ्य दक्षहस्ते जलमादाय मूलमुच्चार्य -

ॐ एहि एहि विदुषि पुरं भंजय भंजय नर्तय नर्तय विग्रह विग्रह महाभैरव बटुक वलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा।

ॐ येह्येहि देवीपुत्र बटुकनाथ कपिलजटाभार भासुरत्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान्नाशय नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा इति मंत्राभ्यां जलमुत्सृजेत्। समांस बलि पक्षे 'ॐ पशुपाशाय विद्महे शिरश्छेदाय धीमहि तन्नः पशु प्रचोदयात्। ॐ अलिपिशित मांसात्र बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितं दिने दिने भक्षय भक्षय गणैः सार्द्धं सारमेय समन्वितः सर्वं गणेश्यो नमः आमिषं गृह्ण गृह्ण भक्षय भक्षय मां रक्ष रक्ष स्वाहा इति मंत्रेण जलमुत्सृजेत्। ततो स्वहस्ते जलमादायेमं बलिं भुञ्जानं वरदं प्रभुं ध्यायेत्। ततो दीपपात्राभिमुखं यंत्रमुद्धृत्य प्रथमं कलशस्थापनादि पूजनं न कृतं चेदत्रावसरे पद्धतिरीत्या विधिवत्पूजयेत्। ततो अष्टोत्तर सहस्र अष्टोत्तर शतं वा यथाशक्ति

मूलं प्रजप्य अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रं च एकविंशतिवारं एकादशवारं वा शतवारं महाप्रयोगश्चेत्सहस्र वारं वा ब्राह्मणैः सहावृत्य मंत्रं प्रजप्य गुह्याति गुह्येति मंत्रेण जपं समर्प्य ततः स्तोत्र कवच सहस्रनामादि दीप समाप्ति पर्यन्तं प्रत्यहं पाठादि कार्यम्। यावद्दीपं तावदशुभं न वदेत् क्रोधादि परस्त्रीषु पराङ्मुखो भवेत्। ततो बटुकान्कुमारिकां सुवासिनींश्च नाना भक्ष्य भोज्यैश्च तर्पयेत्। शान्तिस्तोत्रं पठेत् -

यस्यार्चनेन विधिना किमपीह लोके

कर्मप्रसिद्धमिति नामफलं प्रसूते।

तं सन्ततं सकल साधक वाञ्छिताप्तिं

चिन्तामणि सुरगणाधिपतिं नमामि॥

रक्ताम्बरं ज्वलन पिङ्गजटाकलापं

ज्वालावली कुटिलचन्द्रधर त्रिनेत्रम्।

बालार्क धूम कल कांचन तुल्य वर्णं

देवीसुतं बटुकनाथमहं नमामि॥

हरतु कुल गणेशो विघ्न संधान शेषान्नयतु

कुल सपर्या पूर्णा साधकानाम्।

पिवतु बटुकनाथः शोणितं निन्दकानां

दिशतु सकल कामान् साधकानां गणेशः॥

सतत वितत तेजश्चक्र भासा विनम्र

ग्रसमसमुदितो वै स्वाससन्दोहनाभिः।

प्रलय नयननाभिः किन्तु चात्मोद्भवाभिः

भवतु भुवन गर्भो भैरवो नः पुनातु॥

या काचिद्योगिनी रौद्रा सौम्या घोरतरा परा।

गृह्यतां बलिपूजां सां मम व्याधि व्यपोहतु॥

नन्दन्तु साधकां सर्वे विनश्यन्तु प्रदूषकाः।

अवस्था शाम्भवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा॥

इति पठित्वा पश्चाज्जपदशांशेन होमादि ब्राह्मणभोजनान्तैः सन्तर्प्य ब्राह्मणाज्जपानुसारेण दक्षिणादिभिः सन्तोष्य आचार्य कार्यानुसारेण दक्षिणावस्त्रालंकारदिभिः सन्तोष्य प्रणमेत्॥

॥ इति दीपदान प्रयोगः॥



## वीर साधन प्रयोगः

तत्र साधकेन्द्रः कृतनित्यक्रियः पलाशपत्रकृत षोडश पुटेषु जलेन प्रफुल्लितान् सुपक्वान् पक्वान्वा माषान् मुद्गान् मसूरान् चणकान् ओदनं क्षीरं अपूपान् सुहालीन् प्रत्येकमेकैकः पदार्थो द्वे द्वे पात्रे एवं षोडश पात्रे सम्पूर्य अन्यपात्रे किञ्चिदधिकं च पूर्वोक्तं सर्वं कन्यया कर्तितं कर्पाससूत्रं कुंकुमेन रंजितान् क्षीरवृक्षभवानष्टौ कीलान् स्तंभार्थमेकं कीलं तेभ्यः स्थूलम् एवं नव कीलान् गंधाक्षतपुष्पधूपदीपान् अष्टौ ताम्बूलान् फलानि च गृहीत्वा उत्तरसाधक सहितः श्मशानं निकटे गत्वा पादौ प्रक्षाल्य आचम्य स्वेष्ट देवतां स्मृत्वा कृताञ्जलिरिदं वाक्यं वदेत्। -

अत्र श्मशाने याः काश्चिद्देवता निवसन्ति हि।

ताः प्रयच्छन्तु मे सिद्धिं प्रसन्नाः सन्तु पातु माम्॥

इति सम्प्रार्थ्य आत्मरक्षां कुर्यात्। तद्यथा -

पूर्वे मां शंकरः पातु तथाग्नेयां च शूलधृक्।

कपाली दक्षिणे पातु नैर्ऋत्ये जटिलोऽवतु॥

पश्चिमे पार्वतीनाथो वायव्ये प्रमथाधिपः।

उत्तरे मुण्डमालोऽव्यादीशान्ये वृषभध्वजः॥

ऊर्ध्वं पातु तथा शम्भुरधस्ताद् धूलिधूसरः।

अग्रतो भैरवः पातु पृष्ठतः पातु खेचरः॥

दक्षिणे भूधरः पातु वामे च पिशितासनः।

केशान्पातु विशालाक्षो मूर्धानं च मरुत्प्रियः॥

मस्तकं पातु भृग्वीसो नेत्रे पातु महामनाः।

कपोलौ पातु वीरेशो गण्डौ गण्डाभिर्मर्दनः॥

उत्तरोष्ठे विरुपाक्षो ह्यधरे योगिनीप्रियः।

अक्षेषु दक्षविध्वंसी चिबुके च कपालधृक्॥

कण्ठे रक्षतु मां देवो नीलकण्ठो जगद्गुरुः।

दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो वामस्कन्धे वसुंजयः॥

दक्षिणे च भुजे सर्वमन्त्रनाथः सदावतु।  
 वामेभुजे सार्वभौमो हृदयं पातु पाण्डुरः॥  
 दक्षस्तने पशुपतिर्वामे पातु महेश्वरः।  
 उदरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा॥  
 नाभौ कामप्रविध्वंसी जंघे पातु दयामयः।  
 जानुनी पातुजामित्रो गुल्फौ गौरीपतिः सदा॥  
 पादपृष्ठे सामनिधिस्तथा पादांगुलिर्हरः।  
 पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः॥

इति रक्षा मन्त्रान् पठित्वा पूर्वादिदिक्षु रक्षाबीज मन्त्रन्यठन्नमस्कुर्यात्।

|                                    |                                 |
|------------------------------------|---------------------------------|
| ॐ हां हीं हूं हः नमः पूर्वे,       | ॐ प्रां प्रां नमः वायव्ये,      |
| ॐ हीं हूं हौं नमः आग्नेये,         | ॐ भ्रां भ्रां भैरवे नमः उत्तरे, |
| ॐ हीं श्रीं नमः दक्षिणे,           | ॐ बूं बूं भूं फट् नमः ईशान्ये,  |
| ॐ ग्लूं न्लूं नग नग नमः नैऋत्ये,   | ॐ ग्लों न्लूं नमः ऊर्ध्वे,      |
| ॐ यूं भूं प्रूं सं सः नमः पश्चिमे, | ॐ घ्रां घ्रं घ्रः नमः अधरे।     |

एवं बीजमन्त्रेण रक्षां कृत्वा। ततः पूर्वाद्यष्टदिक्षु कीलाष्टकं मध्यश्मशाने च स्तंभार्थं कीलकं च निखाय पूजा साहित्यं मध्यस्तंभ समीपे संस्थाप्य पूर्वाभिमुखो भैरवं प्रार्थयेत्।

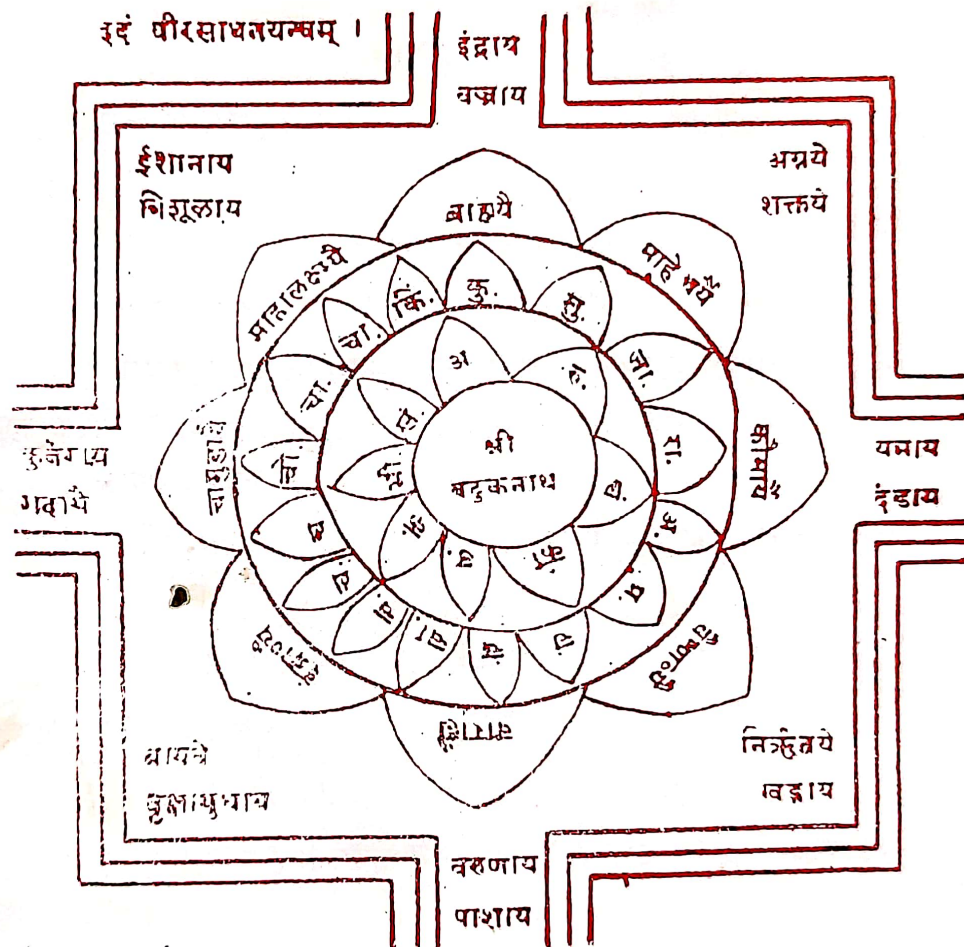
ॐ भां भैरव भैरवाय नमः भां भैरव भैरव भयंकर हर मां रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा। इति प्रार्थयित्वा -

ततः सिद्धमाष भरित पलाश पुटकं गंध पुष्प धूपदीपादि पूजासामग्री गृहीत्वा पायसोदक पात्रहस्तो निर्भयः पूर्वकीलसमीपं गत्वा। तत्र -

ॐ लं इन्द्र सांग सपरिवार इहागच्छेत्यावाह्य, ऐरावतारूढं वज्रहस्तं पीतवर्णं सहस्राक्षं सुरगणपरिवारं ध्यात्वा। ॐ लं इन्द्राय नमः आसन अर्घ्य पाद्य आचमन स्नान गंधपुष्प अक्षत धूप दीप उपचारैः सम्पूज्य तत्पुरतः चतुरस्रं मण्डलं जलेन कृत्वा तत्र माषपुटकं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ हां हीं हूं भो इन्द्र सुरनायक शीघ्रं मे प्रसन्नो भव सनातनीं सिद्धिं मे देहि देहि रक्ष मां इमं माष वलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट् स्वाहा।





इति मन्त्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृजेत् ताम्बूलं च दत्वा प्रणमेत्।

ततः आग्नेय कोण गत कील समीपं गत्वा तत्र ॐ रं अग्ने सांग सपरिवार  
इहागच्छागच्छेत्याबाह्य मेषारूढं शक्तिहस्तं त्रिनेत्रं तेजोनिधिं ध्यात्वा ॐ रं अग्नये  
नमः आसनादि दशोपचारैः सम्पूज्य तत्पुरतश्चतुरस्रं मंडलं जलेन कृत्वा तत्र  
मुद्ग भरितं पुटकं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ ह्रीं हूं हों अग्नेतेजोनायक शीघ्रं मे प्रसन्नो भव सनातनीं सिद्धिं मे देहि  
इमं मुद्गवलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्। इति मन्त्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य  
ताम्बूलं च दत्वा प्रणम्य।

ततः दक्षिण कील समीपं गत्वा तत्र -

ॐ टं यम सांग सपरिवार इहागच्छागच्छेत्याबाह्य।

महिषारूढं कृष्णवर्णं दण्डहस्तं प्रेतगणपरिवेष्टितं ध्यात्वा।

ॐ टं यमाय नमः आसनाद्युपचारैः पूर्वोक्तैः सम्पूज्य तत्पुरतः चतुरस्र  
मण्डलं जलेन कृत्वा तत्र मसूर भरितं पुटकं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा  
वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ प्रां प्रीं प्रूं भो यम प्रेताधिपते शीघ्रं मे प्रसन्नो भव इमं मसूरवलिं गृह्ण  
गृह्ण हुं फट्।

इति मन्त्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य ताम्बूलं च दत्वा प्रणम्य।

ततः नैऋत्यकोणगत कीलसमीपं गत्वा तत्र -

ॐ क्षं निर्ऋते सांग सपरिवार इहागच्छागच्छेत्याबाह्य -

प्रेतारूढं धूम्रवर्णं खड्गहस्तं रक्षोभिः परिवृतं ध्यात्वा, ॐ क्षं निर्ऋते नमः  
पूर्वोक्तैः सम्पूज्य।

तत्पुरतश्चतुरस्रं मंडलं जलेन कृत्वा तत्र - चणक पूरितं पुटकं निधाय  
दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ फ्रें फ्रें फ्रें हूं हूं खें खें खें हों हों भो भो रक्षोनाथ शीघ्रं मे प्रसन्नो भव  
इमं चणक वलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्।

इति मन्त्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य ताम्बूलं च दत्वा प्रणमेत्।

ततः पश्चिम दिग्गत कील समीपं गत्वा तत्र ॐ बं वरुण सांग सपरिवार  
इहागच्छ आगच्छ इति आवाह्य -



मकरारूढं पाशहस्तं श्वेतवर्णं यादोगण परिवार सहितं ध्यात्वा।

ॐ वं वरुणाय जलनाथाय नमः पूर्वोक्तैः सम्पूज्य तत्पुरतश्चतुरस्रं मण्डलं जलेन कृत्वा तत्रौदनं पूरितं पात्रं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ ब्रां ब्रीं ब्रूं भो भो वरुण जलनाथ शीघ्रं मे प्रसन्नो भव सिद्धिं मे देहि इमं ओदनवलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्।

इति मंत्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य ताम्बूलं च दत्वा प्रणमेत्।

ततो वायुकोणगत कील समीपं गत्वा तत्र ॐ यं वायो सांग सपरिवार इहागच्छागच्छेत्यावाह्य -

मृगारूढं वृक्षायुधधरं मरुद्गण सहितं ध्यात्वा ॐ यं वायव्ये नमः पूर्वोक्तैः सम्पूज्य, तत्पुरतश्चतुरस्रं मण्डलं जलेन कृत्वा तत्र पायसं पूरितं पात्रं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ वां वीं वूं ॐ ब्रां ब्रीं ब्रूं भो वायो भुवनपते शीघ्रं मे प्रसन्नो भव सिद्धिं मे देहि इमं पायस वलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्।

इति मंत्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य ताम्बूलं च दत्वा प्रणमेत्।

ततः उत्तर दिग्गत कीलसमीपं गत्वा तत्र ॐ कुं कुबेर सांग सपरिवार इहागच्छागच्छेत्यावाह्य। नरवाहनं गदाहस्तं शुक्लवर्णं यक्षगण परिवेष्टितं ध्यात्वा ॐ कुं कुबेराय नमः पूर्ववत् सम्पूज्य, तत्पुरतश्चतुरस्रं मण्डलं जलेन कृत्वा तत्रापूपपूरितं पात्रं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ कूं कूं कूं ॐ क्रां क्रां क्रां भो भो यक्षनाथ शीघ्रं मे प्रसन्नो भव सिद्धिं मे देहि इममपूपवलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्।

इति मंत्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य ताम्बूलं च दत्वा प्रणमेत्।

ततः ईशानकोणगत कीलसमीपं गत्वा तत्र - ॐ हं ईशान सांग सपरिवार इहागच्छागच्छेत्यावाह्य। वृषभारूढं शूलहस्तं श्वेतवर्णं विद्यागण सेवितं ईशानं ध्यात्वा। ॐ हं ईशानाय नमः पूर्वोक्तैः सम्पूज्य तत्पुरतश्चतुरस्रं मण्डलं जलेन कृत्वा सुहालीं पूरितं पात्रं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् -

ॐ श्रीं श्रीं ॐ श्रां श्रां श्रां भो ईशान विद्याधिपते शीघ्रं मे प्रसन्नो भव सिद्धिं मे देहि इमं शष्कुली वलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्।

इति मन्त्रेण तस्मिन्पात्रे जलं वलिं चोत्सृज्य ताम्बूलं च दत्वा प्रणमेत्।

इत्यष्ट दिक्पाल बलिं दत्वा मध्यस्तंभसमीपं गत्वा निर्भया सन् “ॐ हां ह्रीं हूं स्तंभाय स्वाहा।” इति मन्त्रेण पूर्वोक्तैः सम्पूज्य मंत्रमयं कवचं पठेत्। तद्यथा “ॐ हां ह्रीं हूं हः क्षां क्षीं क्षूं क्षः खां खीं खूं खः घ्रां घ्रीं घूं घ्रः म्रां म्रीं म्रूं म्रः म्रं म्रे म्रौ म्रौ हों हों हों हों क्लों क्लों क्लों क्लों श्रों श्रों श्रों श्रों ज्रों ज्रों ज्रों ज्रों हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं फट् सर्वतो रक्ष रक्ष रक्ष रक्ष भैरवनाथ नाथ हुं फट्।”

इति मन्त्रेण स्वशरीरे व्यापकरूपेण आत्मरक्षां कृत्वा स्तंभ समीपे स्वासने पूजिते पूर्वाभिमुख उपविश्य स्वपुरतः स्तंभात्पश्चिमे सुसमे भूतले अष्टदलं पद्मं कृत्वा तद्वहि षोडशदलं तद्वहि पुनरष्टदलम् तद्वहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रत्रयं च कृत्वा तन्मध्ये देवमावाह्य षोडशोपचारैः सम्पूज्य अंगानि सम्पूज्य तत्राष्टदले पूर्वादिक्रमेण ॐ असितांग भैरवाय नमः, ॐ रूरु भैरवाय नमः, ॐ चण्ड भैरवाय नमः, ॐ क्रोध भैरवाय नमः, ॐ उन्मत्त भैरवाय नमः, ॐ कपाल भैरवाय नमः, ॐ भीषण भैरवाय नमः, ॐ संहार भैरवाय नमः।

ततः षोडशदलेषु श्री बटुक षोडश मित्राणि पूजयेत्। पूर्वादिक्रमेण। तद्यथा -

ॐ कुलिशाय नमः, ॐ सुकुलिशाय नमः, ॐ जामित्राय नमः, ॐ रामठाय नमः, ॐ अरिभाय नमः, ॐ प्रचण्डाय नमः, ॐ चण्डकेशाय नमः, ॐ चण्डात्मने नमः, ॐ चामराय नमः, ॐ चरित्राय नमः, ॐ चमत्काराय नमः, ॐ चञ्चलाय नमः, ॐ चारुभूषणाय नमः, ॐ चामीकराय नमः, ॐ चारु वाहाय नमः, ॐ कितवाय नमः।

इति सम्पूज्य, तद्वहिरष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण - ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णव्यै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ महालक्ष्म्यै नमः। इति मातृः सम्पूज्य, वहिः चतुरस्रे दिक्पालान् पूजयेत् पूर्वादि क्रमेण। तद्यथा - ॐ इन्द्राय नमः, ॐ अग्नये नमः, ॐ यमाय नमः, ॐ निर्ऋतये नमः, ॐ वरुणाय नमः, ॐ वायव्ये नमः, ॐ कुबेराय नमः, ॐ ईशानाय नमः।

इति लोकेशान् सम्पूज्य तन्निकटे अस्त्राणि पूजयेत् पूर्वादिक्रमेण।

ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ दण्डकाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ वृक्षायुधाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ त्रिशूलाय नमः इति अस्त्राणि सम्पूज्य आवाहित देवताभ्यो पंचोपचारैः पृथक् पृथक्



पात्रेषु च पायसनैवेद्यं च समर्प्य, अक्षतान् आदाय स्थापित यन्त्रदेवतामण्डले  
विकिरन् वीरशान्तिं पठेत्।

ॐ चण्ड आयाहि, ॐ प्रचण्ड आयाहि, ॐ ऊर्ध्वकेश आयाहि,  
ॐ भीषण आयाहि, ॐ प्रभीषण आयाहि, ॐ व्योमकेश आयाहि,  
ॐ व्योमवाहो आयाहि, ॐ व्योमव्यापक आयाहि।

इत्याहूय पृथग्गन्धादिभिरुपचारैः सम्पूज्य पायसनैवेद्यं च पृथक् पृथक्  
समर्प्य निर्भयः सन् पश्चिमाभिमुखः प्राणायाम ऋष्यादि न्यास पूर्वकम् पूर्वोक्तान्  
न्यासान्कृत्वा प्राग्वन्मालां सम्पूज्य मूलमन्त्रस्याष्टाक्षर पदोच्चारणपूर्वक-  
मुच्चैस्तरां जपन् वामहस्तेन पायसपात्रमादाय देवं भोजयन् सुप्रसन्नचित्तो जपं  
कुर्यात्। ततस्तृप्तो देवोवरं वरयेति ब्रूयात्तदा दंडवत् भूमौ प्रणम्य निजेप्सितवरं  
गृहीत्वा स्वयं गत्वा महोत्सवं कुर्यात्।

॥ इति वीरसाधन प्रयोगः ॥

□□□

## प्रयोगानुष्ठान-विधि

जितेन्द्रियो हविष्याशी जपेदेनं मनुं प्रिये।  
 पंचविंशत्सहस्राढ्यं पंचलक्षं दशांशतः॥  
 हुनेत्तिलैस्त्रिमध्वक्तैः तर्पयेत्तद्दशांशतः।  
 अभिषिंच्याऽऽत्मनो मूर्द्धनि मूलमंत्रेण साधकः॥  
 अभिषेक दशांशेन ब्राह्मणान्भोजयेत्प्रिये।  
 एवं सिद्धमनुर्मन्त्री नित्य नैमित्तिके रतः॥

अयं कृतयुग जपः कलौ चतुर्गुण जपः कार्यः। एवमक्षरलक्षं वा  
 तदर्द्धार्द्धमेवमेति यामलोक्तत्वात्। अक्षरलक्षमेव विंशतिलक्षम्।  
 एतत्संख्याकथनं तु कलियुगमारभ्य कृतयुग पर्यन्त परिमितिज्ञेयमीश्वरस्य  
 स्वतन्त्रेच्छत्वात्। अतएव कलियुगजप प्रतिपादकेषु संग्रहग्रन्थेषु  
 शारदातिलकादिषु वर्णलक्षमुक्तमिति।

विघ्न दुर्गा समभ्यर्च्य बलिं दत्त्वा विधानतः।  
 काम्यानि साधयेन्मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात्॥  
 अन्नं शालिसमुद्भूतं मांसं पक्वं सशर्करम्।  
 लाजा चूर्ण गुडापूप माक्षिकेक्षु रसान्वितम्॥  
 घृतप्लुतं सर्वमेतदेकीकृत्य महेश्वरि।  
 कृत्वाग्रासं समाराध्य बटुकेशं सुरेश्वरि॥  
 प्रागुक्तेन विधानेन रक्तचन्दन संयुतैः।  
 रक्तपुष्पाक्षतैर्देवि धूपदीप मनोहरैः॥  
 तस्याऽग्रे मण्डलं कृत्वा चतुरस्रं सुशोभनम्।  
 त्रिकोण गर्भितं तत्र पात्रे हेममये शुभे॥  
 राजते वाऽथ कांस्ये वा निधाय कवलं शुभम्।  
 अर्चयित्वाऽथ तत्पिण्डं गन्धाद्यैर्मूलमंत्रतः॥  
 बलिद्रव्याय इत्युक्त्वा नम इत्यर्चयेत्ततः।  
 ततो जलं समादाय चुलुकेन महेश्वरि॥



मूलमंत्रं समुच्चार्य सम्बोध्य बटुकं प्रिये।  
 इमं बलिं गृह्ण युग्मं स्वाहान्तं समुदीर्य च॥  
 जलं समर्पयत्तत्र चिन्तेयेत्बटुकं प्रिये।  
 स्वाहान्ते बलिमादाय भुञ्जानां बटुकं प्रभुम्॥  
 राजसोऽयं बलिर्देवि कथितः सर्व सिद्धिदः।  
 सात्त्विको राजसश्चैव बलिः स्याद् द्विविधा प्रिये॥  
 राजसः कथितो देवि सात्त्विकं शृणु वल्लभे।  
 पूर्वोक्तैः सकलैर्द्रव्यैः मांसहीनैर्महेश्वरि॥  
 मुद्गररूपं समायुक्तैः पायसेन समन्वितैः।  
 मधुरत्रयं संयुक्तैः प्राग्वद्दद्याद्विचक्षणः॥  
 ब्राह्मणो नियतः शुद्धः सात्त्विकं बलिमाहरेत्।  
 सात्त्विकं ध्यानमाख्यातं प्रागेव तव सुप्रभे॥  
 इदानीं राजसध्यानं शृणु वक्ष्ये सुरेश्वरि।  
 उद्यत्सूर्यसहस्राभं त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम्॥  
 रक्तांगरागमारक्तं माल्याम्बरं विभूषितम्।  
 स्मेराननं नीलकण्ठं नानाभरणं भूषितम्॥  
 दक्षिणोर्ध्वकरे शूलं तदधो वरमद्विजे।  
 वामोर्ध्वहस्ते देवेशि कपालं तदधोऽभयम्॥  
 दधानं संस्मरेद्देवं स्मर्तृणामभयप्रदम्।  
 काम्यं कर्मसु देवेशि ध्यात्वा देवं प्रभुं सदा॥  
 क्रूरकर्मसु देवेशि तामसं ध्यानमुच्यते।  
 अञ्जनाचलसङ्कासं मुण्डमालां विभूषितम्॥  
 चन्द्रखण्डं लसत्पिङ्गं केशभारं दिगम्बरम्।  
 त्रिनेत्रं दक्षिणैर्हस्तैर्दमरुं च शृणिं तथा॥  
 खड्गं शूलं च देवेशि दधानमपरैः करैः।  
 अर्धं नागपाशं च घन्टाञ्च नृकपालकम्॥  
 ऊर्ध्वादिक्रमतो देवि भीमदंष्ट्रं भयानकम्।  
 सर्वाभरणसंदीप्तं मणिनूपुरं मण्डितम्॥  
 किंकिणीजालं संयुक्तं ध्यायेत् बटुकभैरवम्॥

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातम् अपमृत्यु निवारणम्।  
 आयुरारोग्यजननमपवर्ग फलप्रदम्॥  
 राजसं धर्मकर्मार्थं सिद्धिदं तामसं प्रिये।  
 शत्रुक्षयकरं भूतकृत्यापस्मार रोगनुत्॥  
 एवं ध्यानं समाख्यातं साधकाभीष्ट सिद्धिदम्।  
 कार्यकर्मरम्भदिने तत्समाप्ति दिने तथा॥  
 बलिर्देयो महादेवि तत्तत्कर्म फलाप्तये।  
 जितेन्द्रियः प्रजुहुयादाज्येनेष्टफलं भवेत्॥  
 इक्षुखण्डैर्हुनेद्देवि वश्येदखिलं जगत्।  
 कैरवै कुसुमैर्होमात्पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम्॥  
 तिलाढ्यतण्डुलैर्हुत्वा धनधान्यं लभेद्बहु।  
 पुष्ट्यै श्रीतरुसम्भूतैर्हुत्वा प्राप्नोति तां श्रियम्॥  
 त्रिस्वादुयुक्तलवणैर्होमः स्त्रीजनवश्यकृत्।  
 होमो वेतसमुद्भूतसमिद्धिर्वृष्टि दायकः॥  
 अत्र होमाद्धान्यधनं सम्पत्तिर्जायतेऽचिरात्।  
 रोगोक्तौषधहोमेन रोगा नश्यन्ति तत्क्षणात्॥  
 कृत्यापस्मार भूतादिभये व्याघ्रादिजे शिवे।  
 कृष्णाष्टमी समारभ्य यावत्स्यात्तच्चतुर्दशी॥  
 तिलैस्तण्डुलसंमिश्रै मधुरत्रय लोलितैः।  
 त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जुहुयात्संस्कृतेऽनले॥  
 बटुकेश्वरमभ्यर्च्य भक्ष्य भोज्य फलान्वितम्।  
 नित्यं निवेद्यं नैवेद्यमर्द्धरात्रे बलिं हरेत्॥  
 त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जपित्वा प्रयतो वशी।  
 समाप्ति दिवसे रात्रौ जपं कृत्वा बलिं हरेत्॥  
 ततः कारयिता राजा तोषयेत्साधकं धनैः।  
 प्रयोग दिवसे नित्यं भक्ष्यभोज्यैः सदक्षिणैः॥  
 विप्रान् सप्त महादेवि तोषयेद्वाञ्छिताप्तये।  
 समाप्ति दिवसे विप्रान् सप्त सप्त समाहितः॥



भोजयेद्वसवित्ताद्यैः तोषयेज्जगदीश्वरि।  
 विधिनाऽनेन सन्तुष्टो बटुकेशः प्रयच्छति॥  
 तेजो बलं यशः पुत्रान् कीर्तिं लक्ष्मीं मनोगताम्।  
 नश्यन्ति शत्रवरस्तस्य वर्द्धन्ते मित्रबान्धवाः॥  
 अवग्रहो न जायेत् राष्ट्रे तस्य महीपतेः।  
 केवलैर्लवणैर्हुत्वा स्तम्भनं कुरुते ध्रुवम्॥  
 अनेनैव प्रयोगेन निगडान्मुच्यते नरः।  
 पलं वचाया देवेशि चूर्णं कृत्वाऽति सूक्ष्मकम्॥  
 मन्त्रयेन्मनुनाऽनेन देवि साग्रं सहस्रकम्।  
 विभजेदूनपञ्चाशत् भागेन परमेश्वरि॥  
 दिनशो भागमेकैकं भक्षयेद् गोघृतान्वितम्।  
 या नारी सा सुतं सूते मेधारोग्य बलान्वितम्॥  
 दीर्घायुष्यं च नन्द्याऽपि किं पुनः कन्यकाप्रसूः।  
 प्रयोगस्य तथाऽऽद्यन्ते बटुकाय बलिं हरेत्॥

रुद्रयामले तु -

वन्द्या चिकित्सां कुर्वाणो वालाक्काभं समर्पयेत्।  
 हरिद्रार्द्धपलं चैव वचः चूर्णं तु तत्समम्॥  
 पेषयित्वा तु गोमूत्रे गोलकं घृतसंयुतम्।  
 पद्मपत्रे विनिक्षिप्य स्थापयेद्देवं सन्निधौ॥  
 प्रणिपत्य नमस्कृत्य जपेदुच्चैः सहस्रकम्।  
 देवादेश प्रकारेण प्राशयेत्तु महौषधम्॥  
 श्रीमन्तमायुष्यमन्तं च बलवन्तं सुदर्शनम्।  
 विद्यावन्तं पुत्रवन्तं सद्यः पुत्रमवाप्नुयात्॥

इत्युक्तम्। तथा कौलेशकोटिप्रभेदे -

साधयेद्विधिवद्भस्म मन्त्रेणाऽनेन सुव्रते।  
 उशीरं चन्दनं देवि कुण्डं कर्पूरं कुङ्कुमे॥  
 सितार्कमूलवाराही श्रीं सतां परमेश्वरि।  
 त्वचश्च क्षीरघृक्षाणां बिल्वमूलं च योजयेत्॥

सूक्ष्मचूर्णमिदंकृत्वा गोमयेन तु लेपयेत्।  
 अन्तरिक्षे ग्रहीतेन कृत्वा पिण्डानि पार्वति॥  
 शोधयित्वाऽऽतपेनाऽथ विधिवत् संस्कृतेऽनले।  
 मूलमन्त्रेण दग्ध्वा च भस्म सङ्गृह्य तत्पुनः॥  
 शुद्धे पात्रे विनिक्षिप्य (शोधयित्वा यथाविधिः।  
 मालती केतकी पुष्पैर्वासितं संस्पृशन् शिवे॥  
 अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं तत्र सम्पूज्य भैरवम्।  
 भस्माधारे विनिक्षिप्य संस्थाप्य) दिनशः शिवे॥  
 त्रिपुण्ड्रं तेन कुर्वीत वेदोक्त विधिना द्विजः।  
 शूद्राद्यैर्मूलमन्त्रेण कर्त्तव्यं परमेश्वरि॥  
 मूलेनैवाऽथवा सर्वैः कर्त्तव्यं भस्मधारणात्।  
 तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्वा दुष्टा महाग्रहाः॥  
 रिपुचोरमृगादिभ्यो भयं तस्य न जायते।  
 वर्द्धन्ते सम्पदः सर्वाः पूज्यते सकलैर्जनैः॥  
 राजानो वशमायान्ति समात्याः सपरिच्छदाः।  
 वचाचूर्णं पलस्याऽर्द्धं तन्मानं घृतं संयुतम्॥  
 पद्मपात्रे विनिक्षिप्य त्रिशतं प्रजपेद् बुधः।  
 प्रजपन्नियतो भूत्वा पुनर्लक्षत्रयं जपेत्॥  
 तस्यैवं कुर्वतः प्रज्ञा निःसीमा च भवेद् ध्रुवम्।  
 गद्यपद्यमयीवाणी श्रुतस्याऽप्यवधारणम्॥  
 भवेत्तस्य महादेवि भैरवस्य प्रसादतः॥

अत्र वचा चूर्णं भक्षणं तु यावद्भिर्दिनैस्त्रिलक्ष जपो भवति तावद् भागान्  
 कृत्वा प्रत्यहमेकैकं भागं प्राशयेदिति साम्प्रदायिकाः। अस्मिन्प्रयोगे विशेषमाह  
 रुद्रयामले -

शुक्लपक्षे द्वितीयायां शुक्रवारे समाहितः।  
 पूर्ववत्पूजयेद्देवं सिद्धान्नं च निवेदयेत्॥

सिद्धान्न -

तण्डुलान् शालिसम्भूतान् प्रस्थमान मितान् शुभान्।  
 द्विदली कृत मुद्गाग्रं तदर्द्धेन च मेलयेत्॥



गुडं वेदपलं भूयो नारिकेलं च तत्समम्।  
 मरिचं मुष्टिमानं च सैन्धवं च तदद्भकम्॥  
 तदद्भं जीरकं चाऽऽज्यं कुडवार्द्धसमं भवेत्।  
 एतत्सर्वं चतुःप्रस्थं गोदुग्धे मन्दवह्निना॥  
 पचेत्सिद्धोदनं ह्येतद् गणेशास्य महाप्रियम्।  
 अमुना पायसेनाऽथ लङ्कुकापूपकादिभिः॥  
 पलार्द्धं च वचाचूर्णं तन्मानघृतं संयुतम्।  
 पद्मपत्रे विनिक्षिप्य सहस्रं तु जपेद् बुधः॥  
 अत्र सहस्रं जपे विशेषः अन्यत्सर्वं समानम्।

### रुद्रयामलम् -

विवादक्षेत्रे विषये चतुर्थ्याङ्गारवारके।  
 पूर्ववद्देवमाराध्य नैवेद्यं चैव पूर्ववत्॥  
 जपमाना स्वयं मंत्रं नमस्कृत्यैव बुद्धिमान्।  
 विवादक्षेत्रे मध्ये तु देवं ध्यात्वा तु तत्क्षणात्॥  
 अभिमन्य मृदं प्राश्य सन्ध्योपास्य स्वयं प्रभुम्।  
 सप्ताहस्त्रिषु लोकेषु तत्क्षेत्रे तच्च सिद्ध्यति॥  
 मृत्युञ्जयमहं वक्ष्ये यथा तच्छृणु सुन्दरि।  
 उत्तरायण काले तु दक्षिणायन एव च॥  
 कालज्ञानमिदं ज्ञात्वा तत्त्वज्ञानी जपेत्क्रमात्।  
 कृष्णाष्टम्यां चतुर्थ्यां वा अङ्गारक दिने ततः॥  
 सात्त्विकं बालरूपं च द्विभुजं चिन्तयन्बुधः।  
 अर्चयित्वा यथान्यायं सिद्धात्रं च निवेदयेत्॥  
 यद्रूपं कथितं पूर्वमादिपर्यन्तं मध्यमम्।  
 तुषार कर्णिकाभासं ध्यात्वा देवं समाहितः॥  
 भूचरीमुद्रया युक्तं खेचरी बहुमेलनम्।  
 ध्यानयोगेन मंत्रं च मनसाऽपि जपेद्बुधः॥  
 इत्येवं तु जपेल्लक्षं तदा मृत्युञ्जयो भवेत्।  
 मृत्युभङ्गाभिकाङ्क्षी चेत्सात्त्विकं श्वेतरूपकम्॥

हृदये स्वगतं ध्यात्वा तन्मध्ये देवमास्थितम्।  
 न तस्य कालानिः क्रान्तिर्मूर्ति मण्डलमाप्नुयात्॥  
 कृष्णपक्षे चतुर्दश्या भूमिपुत्रस्य वासरे।  
 आराध्य विधिवद्देवं तस्याऽग्रे स्थापयेद्बुधः॥  
 रोचनाहेमजे पात्रे सम्पूज्य विधिना तथा।  
 गंधपुष्पादिना स्पृष्ट्वा तं जपेद्युतत्रयम्॥  
 तद्गर्भवर्ति प्रज्वालय कपिलाघृत सेवितम्।  
 सौवर्णे नृकपाले वा पात्रे सङ्ग्राह्य भाजनम्॥  
 सम्पूज्य चाऽयुतं जप्त्वा तन्मात्रं मंत्रसङ्ग्रहम्।  
 ध्यात्वा देवं दृशोरेतदाचरेदञ्जनं बुधः॥  
 वश्या भवन्ति ते सर्वे पापा नश्यन्ति साधकः।  
 अथाऽभिषेकं कुर्वीत राज्ञो विजयकाङ्क्षिणः॥  
 पूर्वोक्ते मण्डले देवि वितानध्वज शोभिते।  
 सर्वतोभद्रमालिख्य वेदिकायां सुरेश्वरि॥  
 अष्टद्रोणमितैस्तस्य कर्णिकां शालिभिः शुभैः।  
 आपूरतण्डुलैश्चापि चतुर्दोणमितैः प्रिये॥  
 प्रक्षाल्योपरि विन्यस्य कूर्चाक्षत समन्वितम्।  
 कुम्भं हेमादिरचितं नवरत्न समन्वितम्॥  
 संस्थाप्य विधिवद्देवि शुद्धैस्तोयैश्च पूरयेत्।  
 तस्मिन्क्षीरद्रुमोत्थानि पल्लवानि विनिक्षिपेत्॥  
 कर्पूरं चन्दनं देवि कङ्कोलमगरं पुनः।  
 उशीरं कुङ्कुमं बिल्वं दूर्वा लक्ष्मीं सहामपि॥  
 चम्पकं पद्मिकां जातिमुत्पलं दाडिमं तथा।  
 गोमेदं च विनिक्षिप्य पट्टवस्त्रद्वयेन तु॥  
 संवेष्ट्य तस्मिन्नाबाह्य वटुकं देवि पूजयेत्।  
 राजसं ध्यानरूपं तु ध्यात्वा सर्वोपचारकैः॥  
 प्रथमाष्टदलस्थेषु कुम्भेष्वष्टसु भैरवान्।  
 असिताङ्गादिकान् देवि सम्पूज्य तदनन्तरम्॥



त्रयोदशसु कुम्भेषु बाह्यस्थेषु महेश्वरि।  
 त्रयोदश गणान्यष्ट्वा तद्बाह्ये दशसु क्रमात्॥  
 लोकेश बटुकान्देवि कुम्भेषु परिपूजयेत्।  
 चतुरस्रत्रयस्थेषु तेषु द्वयष्टसु पार्वति॥  
 कुम्भेषु देवि प्रागुक्तान् श्रीकण्ठादीन् यजेत् क्रमात्।  
 प्रागुक्त क्रम योगेन गन्धाद्यैः सुमनोहरैः॥  
 अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं घण्टां स्पृष्ट्वा सुरेश्वरि।  
 पृथक् सहस्रं जुहुयात्पायसैः सर्पिषा तिलैः॥  
 स्पृशन् कुम्भान्प्रतिदिनं रात्रौ तस्मै वलिं हरेत्।  
 राजसोक्त विधानेन मासत्रयसमन्वितम्॥  
 मेषकुक्कुटमीनानां मांसत्रयमुदाहृतम्।  
 सुदिने शुभलग्ने च स्वस्तिवाचन पूर्वकम्॥  
 वेदवेदाङ्गविद्भिश्च विप्रेर्मङ्गलवादिभिः।  
 नदत्सु पञ्चवाद्येषु नमस्कृत्य च भैरवम्॥  
 भूपालं वाऽथवा विप्रं शुद्धं देयं जितेन्द्रियम्।  
 आस्तिकं सत्यसन्धं तमभिषिञ्चेत्प्रसन्नधीः॥  
 अभिषिक्तो महादेवि प्रणिपत्य महेश्वरम्।  
 अभिषेक्तारमसकृद् भूयसीं दक्षिणां प्रिये॥  
 दद्यात्प्रसीदेति तथा साधकस्तावदर्पयेत्।  
 अभिषिक्तो नरपतिः शतक्रतुरिवापरः॥  
 शत्रूञ्जयति सङ्ग्रामे बलाढ्यान् रूपतेजनैः।  
 अभिषिक्तस्तु देवेशि प्रतिमासं महीश्वरः॥  
 स एवं मासावधिशश्चतुः सागरमेखलाम्।  
 उर्वी युद्धेषु महती शक्तिः स्यात्पूर्वतोऽधिका॥  
 शत्रुसैन्य विनाशाय राजा दद्याद्वलिं प्रिये।  
 पूर्वोक्तं राजसं देवि वलिं निष्पाद्य मन्त्रवित्॥  
 सम्पूज्य पूर्ववद्देवं अर्द्धरात्रे महेश्वरि।  
 अन्यूनाङ्गमजं देवि सर्वलक्षण संयुतम्॥

आनीय मूलमन्त्रेण रत्नपात्रे शुभैर्जलैः।  
 गन्धमाल्यैरलङ्कृत्य देवस्याऽग्रे निधाय तम्॥  
 मूलमन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य संरक्ष्याऽस्त्रेण तं प्रिये।  
 कवचेनाऽवगुण्ठ्याऽथ मुद्रया धेनु संज्ञया॥  
 अमृतीकृत्य सर्वान्ते देवतारूपिणे वलिम्।  
 रूपयेत्पशवेत्युक्त्वा नम इत्यर्चयेत्त्रिधा॥  
 गन्धाद्यैस्तं ततो देवि कर्णे तस्य तु दक्षिणे।  
 पशुपाशाय इत्युक्त्वा विद्महे तदनन्तरम्॥  
 विप्रकर्णाय देवेश धीमहीति ततः परम्।  
 तन्नोजीवः समुच्चार्य वदेद्देवि प्रचोदयात्॥  
 इत्येतां पशु गायत्रीं त्रिर्जपित्वा महेश्वरि।  
 निधाय पुरतः खड्ग ॐ ह्रीं कालि विधाय च॥  
 ईश्वरि च लोहितदण्डायै नम इत्यथ।  
 खड्ग त्रिः पूजयेद्देवि मुष्टौ तस्य ततोऽर्पयेत्॥  
 वागीश्वरीं च ब्रह्माणं लक्ष्म्यै नारायण्यै नमः॥  
 मध्येऽग्रदेशे देवेश उमामहेश्वरौ यजेत्॥  
 अर्चितं तं समादाय खड्ग हस्ते महेश्वरि।  
 आदाय मन्त्रयेन्मन्त्री मन्त्रेणाऽनेन सुव्रते॥  
 खड्गायाऽसुरनाशाय देवकार्याय तत्पर।  
 पशुं छेदय शीघ्रं त्वं खड्गनाथ नमोस्तुते॥  
 तत उच्चार्य विधिवत् तिथ्यु लेखावसानकम्।  
 गोत्रं नाम च सङ्कीर्त्य कामनां समुदीर्य च॥  
 श्री भैरव इमां छागवलिं तुभ्यमहं वदेत्।  
 प्राददेति समुच्चार्य कुश पुष्पाक्षतान्वितम्॥  
 जलं पशोस्तु निक्षिप्य शिरसि श्रीशिवे ततः।  
 यज्ञार्थे पशवः सृष्टा यज्ञार्थे पशुघातनम्॥  
 अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः।  
 इति सम्वोधयेत्तस्य शिरः स्पृष्ट्वाऽथ तं पशुम्॥



अस्त्र मंत्रं समुच्चार्य छिन्धियुग्मं ततो वदेत्।  
 स्वाहेत्युच्चार्य तं खड्ग तस्य स्कन्धे नियोज्य च॥  
 स्वात्मानं भैरवं ध्यायंस्तं चैकेन महेश्वरि।  
 प्रहारेण समुच्छेद्य बलि मन्त्रमिमं पठेत्॥  
 शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिने दिने।  
 भक्षय स्वगणैः सार्द्धं सारमेय समन्वितः॥  
 शत्रुनामाक्षरैर्मन्त्रं विदर्भ्य मनुवित्तमः।  
 सैन्यं शत्रोर्लिखित्वैनं कल्पयित्वा महेश्वरि॥  
 पशुना सह तं सैन्यं सम्यक् तस्मै निवेदयेत्।  
 अनेन बलिदानेन सन्तुष्टो भैरवः स्वयम्॥  
 शत्रुसैन्यं विभज्याऽथ स्वगणेभ्यः प्रयच्छति।  
 क्रुद्धः सन्नाशयेच्छीघ्रं नाऽत्र कार्या विचारणा॥

अथ गजाश्वादि प्रयोगः (तंत्र सारसंग्रहे) —

गजानां चतुरङ्गानां विशेषाच्छान्तये ततः।  
 तच्छालासु पुरा प्रोक्तं कुण्डं कृत्वा यथाविधि॥  
 जुहुयात्पायसाद्यैस्तु तिलैस्त्र्ययुतमुक्तवत्।  
 हुत्वा विप्रान् भक्ष्यभोज्यैस्तोषयेच्च सदक्षिणैः॥  
 पूर्वोक्तेन प्रकारेण कलशं स्थापयेत्ततः।  
 गन्धपुष्पादिभिः सम्यग् बटुकेशं समर्चयेत्॥  
 अभिषेचेज्जलैस्तैस्तान् गजानश्वांश्च मंत्रवित्।  
 वर्द्धन्ते प्रत्यहं चैते गजाश्चाऽपि तुरङ्गमाः॥  
 तेषां च समरे शक्तिर्महती जायते ततः।  
 गजाश्वानामजेयाश्च भवन्ति द्विषतां सदा॥  
 अस्मादन्यमहारक्षा नाऽस्ति भूमण्डलेऽखिले।  
 अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि बटुकस्य सुरार्चिते॥  
 आलिख्याऽष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत्।  
 श्रीं ह्रीं क्लीं क्षौमिति तत्पत्रेषु परमेश्वरि॥

बटुकायेत्यक्षराणि द्विरावृत्या लिखेत्त्रिये।  
 वहिः षोडशपत्राढ्यं पद्मं कृत्वा सुशोभनम्॥  
 तत्पत्रेषु लिखेद्देवि शिष्टवर्णास्तु षोडश।  
 मन्त्रस्तु तद्वहिश्चाऽपि पद्मं षोडश पत्रकम्॥  
 तत्पत्रेषु लिखेद्देवि खरान् षोडश सुव्रते।  
 द्वात्रिंशत्पत्र संयुक्तं पद्मं कृत्वाऽथ तद्वहि॥  
 कादि-सान्तांलिखेत्तस्य पत्रेषु परमेश्वरि।  
 वेष्टयेच्चतुरस्रेण यन्त्रमेतद् वरानने॥  
 जयदं सुखदं वश्यं मृत्युदारिद्र्यनाशनम्।  
 श्रीपदं दुरितव्याधि दुष्टग्रह निकृन्तनम्॥  
 भूतापस्मार कृत्यादि भयरक्षाकरं परम्।  
 अस्मात्परतरा रक्षा नाऽस्ति नाऽस्ति न संशयः॥

एकादश सहस्रावृत्ति पाठ करणे आदावन्ते सहस्र संख्याक जप करणे च मासैकेन अपस्मार (मिर्गी) रोग नाशः। केवल बटुक भैरव कवच धारणेनापि अपस्मार रोग वारणम्। अष्टोत्तरशत बटुकभैरव स्तोत्रस्य शनि मंगल दिवसे पाठ मात्रेण सर्व शत्रु निवारणम्। धूपदीप सहित सहस्र संख्यक मंत्र जपेन बटुक भोजनेन एकाहिक-द्वयाहिक-त्रयाहिक-चातुर्थिक ज्वर नाशः। प्रत्यहं षण्मासपर्यन्तं पाठ मात्रेण ग्रहजन्य भय नाशः। प्रत्यहं पाठ मात्रेण चौराग्नि भय नाशः आदावन्ते अष्टोत्तरशत मंत्र जपेन स्तोत्र पाठेन च महामारी शान्तिः।

आयु रक्षार्थ मन्त्रेण सम्पुटितम् शतनाम स्तोत्रम् कार्यम्। एकादश वाराऽष्टोत्तरशत नाम स्तोत्र पाठेन दुःस्वप्न नाशः। कवच सहित स्तोत्रपाठे आदावन्ते अष्टोत्तरशत मन्त्रजपेन मासत्रयेण कारागारान्निवृत्तिः। रात्रौ मासत्रयं सविधि पाठकरणेन स्त्री लाभः। रात्रौ लक्ष संख्यक मंत्र जपेन स्तोत्र पाठेन च पुत्रलाभः। मासत्रय पर्यन्तं रात्रौ एकादश सहस्र संख्यक स्तोत्र पाठेन धन लाभः। दिवानिशि शतावृत्ति सविधि पाठेन रोग नाशः। एकादश दिन पर्यन्तं एकादश सहस्र संख्यक मन्त्रजपेन आदावन्ते स्तोत्र पाठेन च सर्वप्रेतोपद्रव शान्तिः। षण्मास पर्यन्त सविधि स्तोत्र पाठेन मन्त्रजपेन पुनः राज्य लाभः। मासाष्टक पुरश्चरण करणेन राजशत्रु विनाशः। दिवा रात्रौ मंत्र जपेन स्तोत्र पाठेन मासैकेन शृङ्खला-बन्धन निवृत्तिः। अष्टोत्तर शत बटुक भोजनेन निगड् (वेडी) बन्धनान्निवृत्तिः।



मासत्रय पर्यन्तं रात्रौ कवच सहित स्तोत्र पाठेन आदावन्ते अष्टोत्तर शत मंत्र जपेन दारिद्र्य नाशः। एकादश सहस्र संख्यक स्तोत्र पाठेन मंत्रजपेन च सर्वकामनासिद्धिः। षण्मास पर्यन्तं शतावृत्ति-पाठेन आदावन्ते मंत्रजपेन च सर्वोपद्रव नाशः। षण्मास पर्यन्तं सविधि स्तोत्र पाठेन यशोलाभः। एकादश सहस्र संख्यक मंत्र जपेन लक्ष्मीप्राप्तिः। प्रत्यहं शतावृत्ति पाठे मंत्रजपेन मासत्रयेण अपमृत्युनाशः। लक्ष संख्यक स्तोत्र पाठेन मंत्रजपेन आयुरारोग्य वृद्धिः। अष्टोत्तरशतनाम पाठेन अष्टोत्तरशत मंत्रजपेनाभीष्ट सिद्धिः। त्रिसन्ध्यं पाठेन मंत्रजपेन संवत्सरेण सर्वकामनासिद्धिः। पृथ्वीलाभार्थं त्रिसन्ध्यं षण्मास पर्यन्तं पुरश्चरणं कार्यम्। वारत्रयं रात्रौ पाठेन मासैकेन राजानं वशमानयेत्। निशा रात्रौ सविधि वारत्रयं पाठेन आदावन्ते अष्टोत्तरशत मंत्र जपेन च वशीकरण सिद्धिः। निशारात्रौ वारत्रयं कवच स्तोत्र पाठेन मंत्र जपेन च संवत्सरेण विद्याप्राप्तिः प्रत्यहं सहस्र संख्यक मंत्रजपेन आदावन्ते अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र पाठेन च डाकिनी शाकिन्यादिभय नाशः। वर्षत्रय पर्यन्तं दिवारात्रौ पाठेन प्रतिष्ठा लाभः।

## बटुक भैरव-षट्कर्म प्रयोग विधिः

(रुद्रयामल तन्त्रे एकदिवसीय प्रयोगः)

- १) स्तम्भन प्रयोग - रविवार के दिन प्रातःकाल श्मशान में जाकर मूल मंत्र का अयुत जप करे तथा अर्द्धरात्रि के समय जायफल, जावित्री तथा कन्हेर के फूल घृत में मिलाकर दशांश हवन करने से शत्रु स्तम्भन होता है।
- २) मोहन प्रयोग - सोमवार को मध्याह्न के समय कूप जल से स्नान कर बगीचे में बैठकर मूलमंत्र का १०,००० जप करे, तथा भैंस का घृत, दही और चीनी मिला कर हवन करे और हवन भस्म का तिलक करे तो जो देखे वश में हो।
- ३) मारण प्रयोग - मंगलवार को अर्द्धरात्रि के समय चौराहे पर जाकर मूलमंत्र का अयुत जप करें, घृत, खीर, लाला चन्दन व स्त्री के केश मिलाकर हवन करने से शत्रु का नाश अवश्य हो।
- ४) आकर्षण प्रयोग - बुधवार को चार घड़ी सूर्य रहे तब सूने मकान में जाकर मूलमंत्र का अयुत जप करे, पश्चात् घी, शक्कर, कन्हेर के फूल, बिल्व का फल इन सबको मिलाकर दशांश हवन करने से रम्भादि अप्सरा का भी आकर्षण हो।

५) वशीकरण प्रयोग - गुरुवार को प्रातः काल नदी तटपर जाकर अयुत जप करे तथा घी, आमला और बिल्व के फल का दशांश हवन करने से इच्छित वशीकरण होगा।

६) उच्चाटन प्रयोग - शुक्रवार के दिन सायंकाल वटवृक्ष के नीचे बैठकर मूलमंत्र का अयुत जप करें पश्चात घृत, दूध, दही इक्षुरस, गोमूत्र एवं खीर मिलाकर दशांश हवन करने से शत्रु का उच्चाटन हो।

### स्तवराज पुरश्चरण प्रयोगः

हविशात्र च माषात्रं यवात्रं तन्दुलानि वा।  
 सकृज्जग्ध्वा वाग्यतश्च भूमिशायी जितेन्द्रियः॥  
 एकादश सहस्रं वै पुरश्चरणमाचरेत्।  
 स्तोत्रादौ मूलमंत्रं च ह्यष्टोत्तरशतं जपेत्॥  
 स्तोत्रान्ते च शतावृत्तिं कृत्वा स्तोत्रं पठेत्पुनः।  
 एवं सम्पुटितं कृत्वा देवं नत्वा पठेत्तत्तवम्॥  
 दशांशं हवनं कुर्यात्तद्दशांशेन तर्पणम्।  
 मार्जनं तद्दशांशेन दशांशं विप्रभोजनम्॥  
 एवं कृते मनुष्यो वै प्राप्नुयान्मनसेषितम्।  
 मतान्तरं प्रवक्ष्यामि यं कृत्वा नावसीदति॥  
 प्रथमं न्यास पूर्व हि स्तोत्रपाठं विधाय च।  
 शतं वा मंत्रजाप्यं हि नित्यं कृत्वा सुमंत्रकः॥  
 जप्त्वा च विधिपूर्वं हि यथाशक्ति पुनः सुधीः।  
 स्तोत्रपाठं पुनः कृत्वा पूर्वोक्तान्नियमांश्चरेत्॥  
 स्तोत्राभ्यां सम्पुटं कृत्वा होमादि पूर्ववत्सुधीः।  
 मया मतद्वयं प्रोक्तं सर्वेषां सुखहेतवे॥  
 प्रयोगांश्च प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।  
 आपदुद्धारकं यो वै पठन्ति प्रत्यहं प्रिये॥  
 तेषां न दुर्लभं किञ्चिदसाध्यं यत्सुरैरपि।  
 दशावर्तं च मन्त्रस्य पुरा कृत्वा पठेत्तत्तवम्॥  
 यन्त्रादि पूर्ववत्कृत्वा त्रिकालं यः पठेदिह।  
 रात्रौ वारत्रयं यो वै तस्य वश्यं जगद्भवेत्॥  
 प्रातश्चैकादशावृत्तिं रात्रौ वा पुनरेव हि।  
 पूर्ववच्च विधिं कृत्वा पठनीयः स्तवः शुभः॥



महानिशि त्रिरावृत्तिं यः करोति सदा शुचिः।  
 राजानो वशमायान्ति सभाशोभाकरो भवेत्॥  
 शनौ च प्रातरुत्थाय दशावृत्तिं चरेदिह।  
 होमादिकं च सम्पाद्य षण्मासादतुलां श्रियम्॥  
 शनौ चैवाश्वत्थमूले पूजयित्वा शिवं प्रिये।  
 शतावृत्तिं पठित्वा तु जगद्वल्लभतामियात्॥  
 रवौ च नाभिमात्रे हि जलेस्थित्वा पठेदिह।  
 एकादश तथावृत्तिं पठित्वा प्राप्नुयाच्छ्रियम्॥  
 पठेच्च रोग शान्त्यर्थं नक्षत्रे पुष्य संज्ञके।  
 अष्टावृत्तिं पठेद्यो वै आरोग्यं लभते ध्रुवम्॥  
 रवौ च ब्राह्मणान्पूज्य पाठयेच्छतवारकम्।  
 वारे वारे च षण्मासं पठित्वा सुतमाप्नुयात्॥  
 सप्तजन्म भवा वंध्या जीवपुत्रा भवेदिह।  
 कन्याकामो भवेद्यो वै त्रिकालं रविवासरे॥  
 षण्मासाद् अप्सरातुल्यां लभते ह्युत्तमां सुताम्।  
 वैद्यानां चैव दुःसाध्यो रोगो भवति तस्य च॥  
 तस्य रोगस्य शान्त्यर्थं पठेत्स्तोत्रमनुत्तमम्।  
 निष्फलञ्च क्रतुर्यस्य भवतीह सदाप्रिये॥  
 सहस्रावर्तनं कृत्वा सफलश्च क्रतुर्भवेत्।  
 ग्रहणे च पठेद्यो वै विधिना चन्द्रसूर्ययोः॥  
 मनोद्विष्टां तदा सिद्धिं प्राप्नुयान्नात्र संशयः।  
 तीर्थे चैव शुभे क्षेत्रे शिवस्य सन्निधौ प्रिये॥  
 पठित्वा पुत्रमंत्रं च सद्यः सिद्धिं लभेदिह।  
 त्रिरावृत्तिं दशावृत्तिं विंशतिं वा शतावधिम्॥  
 सहस्र संख्यया वाथ चैकादश सहस्रकम्।  
 पुरश्चरणकं प्रोक्तं भैरवस्य महात्मनः॥  
 पुरश्चरणकं कृत्वा पठते नित्यमेव च।  
 सद्यः सिद्धिं यथोक्तां हि प्राप्नुयान्नात्र संशयः॥

॥ इति प्रयोगानुष्ठान विधिः॥

## साबर मन्त्र प्रयोग

ॐ काली कंकाली महाकाली के पुत्र  
कंकाल भैरुं, हुकुम हाजिर रहे,  
मेरा भेजा काल करे, मेरा भेजा रक्षा करे,  
आन बांधूं वान बांधूं,  
चलते फिरते औसान बांधूं,  
दसौ सुर बांधूं नौ नाडी बहत्तर कोठा बांधूं,  
फल में भेजूं फूल में जाय,  
कोठे जो पड़े थर थर कांपे  
हल हल हले गिर गिर पड़े,  
उठ उठ भागे वक वक वके,  
मेरा भेजा सवा घड़ी सवा पहर सवा दिन,  
सवा मास सवा वरस कूं वावला न करे,  
तो माता काली की शय्या पर पग धरे,  
वाचा चूके तो उमा सूखे, वाचा छोड़ कुवाचा करे तो,  
धोबी की नाद चमार के कुंड में पड़े,  
मेरा भेजा वावला न करे तो,  
रुद्र के नेत्र की ज्वाला कटे,  
शिर की लटा टूटि भूमि में गिरे,  
माता पारवती के चीर पर चोट पड़े,  
बिना हुकुम नहीं मारना हो तो  
काली के पुत्र कंकाल भैरुं फुरो मंत्र,  
ईश्वरो वाचा सत्यनाम आदेश गुरु का।

विधि - कालरात्रि अथवा ग्रहण की रात्रि को त्रिखूंटो चौका लगा कर  
दक्षिण की ओर मुख करके बैठे, कन्हैर के फल, लड्डू, सिन्दूर, लौंग का जोड़ा,  
चौमुखा दीपक जलाकर इस मंत्र का एक हजार जप करे और दशांश हवन



करे। जब भयंकर स्वरूप में भैरव सामने आये तब निर्भय होकर तत्काल पुष्प माला उनके गले में डाल दे और लड्डू अर्पण कर दे। पश्चात जो भी आप कहेंगे श्री भैरव वह कार्य करेंगे।

### भैरव चेटक

‘ॐ नमो भैरवाय स्वाहा’

इस मंत्र का चालीस हजार जप करके दशांश गोधूम का हवन करे तो भैरव अठारह प्रकार के धान्य देते हैं।

### श्री बटुक भैरव सावर मंत्र

ॐ ह्रीं बटुक भैरव बालक केश, भगवान वेश,  
सब आपद को काल भक्त जनहट को पाल,  
करधरे शिरकपाल दूजे करवाल,  
त्रिशक्ति देवी को बाल भक्तजन मानस को भाल,  
तेतीस कोटि मंत्र को जाल,  
प्रत्यक्ष बटुक भैरव जानिये मेरी भक्ति गुरु की शक्ति  
फुरो मंत्र ईश्वरी वाचा।

विधि - ग्रहण, गंगा दशहरा, होली की रात को उडद के बड़ों का नैवेद्य लगाकर गुगल की धूप देकर एक हजार जप करने से सिद्ध होता है, पश्चात १०८ बार जप करने से भूत, प्रेत, पिशाच आदि बाधा नष्ट होती है, मनोकामना पूर्ण होती है, शत्रु भय नष्ट हो जाता है।

॥ इति सावर मन्त्र प्रयोगः ॥

□□□

## श्री बटुक भैरव मंत्रजप विधि:

ॐ अस्य श्री आपदुद्धारण - बटुक भैरव मंत्रस्य वृहदारण्यको नाम  
ऋषिः त्रिष्टुप् छंदः श्री बटुकभैरवो देवता, ह्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः भैरवः कीलकं  
अभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

### विनियोग

वृहदारण्यक ऋषये नमः शिरसि।  
त्रिष्टुप् छन्दसे नमः मुखे।  
श्री बटुक भैरव देवतायै नमः हृदि।  
ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये।  
स्वाहा शक्तये नमः पादयोः।  
भैरव कीलकाय नमः नाभौ।  
विनियोगाय नमः सर्वाङ्गि।

### करन्यास

ॐ हां वां अंगुष्ठाभ्यां नमः।  
ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः।  
ॐ हुं वूं मध्यमाभ्यां नमः।  
ॐ हैं वै अनामिकाभ्यां नमः।  
ॐ हौं वौ कनिष्ठिकाभ्यां नमः।  
ॐ हः वः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

### षडङ्गन्यास

ॐ हां वां हृदयाय नमः।  
ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा।  
ॐ हुं वूं शिखायै वषट्।  
ॐ हैं वै कवचाय हुं।  
ॐ हौं वौ नेत्रत्रयाय वौषट्।  
ॐ हः वः अस्त्राय फट्।



मन्त्रन्यासः

ॐ हां हीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।  
ॐ हीं बटुकाय तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।  
ॐ हूं आपदुद्धारणाय मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वषट्।  
ॐ है कुरु कुरु अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुं।  
ॐ हौं बटुकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।  
ॐ हः हीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

ध्यानम् -

करकलित कपालः कुण्डली दण्डपाणि-  
स्तरुणतिमिरनीलो व्यालयज्ञोपवीती।  
क्रतु समय-सपर्याविघ्न विच्छेद हेतु-  
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम्॥  
मानसोपचारैः सम्पूज्य।

मूलमन्त्रः -

ॐ हीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय हीं।

॥ इति बटुक भैरव मन्त्र जप विधिः॥

□□□

## क्रियोड्डीश तन्त्रोक्त बटुक भैरव प्रयोगः

अतः परं महेशानि शृणुष्व कर्मसिद्धिदम्।

बटुकं विमलाङ्गाख्यं पूजयेत् षट्सु कर्मसु॥

आचम्य स्वस्ति वाचन सूक्तं पठित्वा अभ्यर्च्य च शिरः पद्मे श्रीगुरुं करुणामयम्।

हे महेशानि! कर्म में सिद्धि देने वाले बटुक भैरव का प्रयोग सुनो! विमल अङ्गवाले बटुक भैरव का षट्कर्मों में पूजन करे। आचमन कर स्वस्ति वाचन सूक्त को पढ़कर निज सहस्रार मण्डल में करुणामय श्री गुरु का पूजन करना चाहिये।

संकल्प —

अद्येत्याद्यमुक्त गोत्रान्त नाम ग्रह विशिष्टोपशमनपूर्वकारोग्यायुर्वृद्धिकामो श्री गणेशादि पूजा पूर्वक बटुक पार्थिव शिव पूजनमहं करिष्ये।

शान्तिकादौ —

रतिं च पूजयेदादौ क्षेत्रपालं ततः पुनः।

रुद्रं च पूजयेद्देवि ध्यानं शृणु महामते॥

शान्ति आदि कर्मों में प्रथम रति का पूजन (ॐ रत्यै नमः) करे तत्पश्चात् क्षेत्रपाल का (क्षं क्षेत्रपालाय नमः) हे देवि! रुद्र का भी पूजन करे। अब आप ध्यान सुनो।

शूलहस्तं महारौद्रं सर्वं विघ्नं निषूदनम्।

पूर्णचन्द्रसमाभासं रुद्रं वृषभवाहनम्॥

एवं ध्यात्वा महाकालं पूजयेद्बुद्धदैवतम्। प्रणवाद्यं रुद्राय नमः इति। भक्ति योगतः शततोलकपरिमितं लिंगमानीय कांस्यापात्रे लिंगं संस्थाप्य। सामान्यार्घ्यं ततः कृत्वा भूतशुद्धिं महेश्वरि। प्राणायाममङ्गन्यासं पीठन्यासं समाचरेत्॥

हाथ में त्रिशूल लिये महा भयंकर स्वरूप सर्व विघ्न का नाश करने वाले, पूर्णचन्द्र के समान कान्ति वाले वृषभ वाहन श्री रुद्र का ध्यान करते हैं।



इस प्रकार महाकाल रुद्र का पूजन करे “ॐ रुद्राय नमः” भक्तिपूर्वक १०० तोले प्रमाण के शिवलिंग को लाकर कांसे के पात्र में स्थापित करे सामान्यार्घ्य स्थापित कर भूत शुद्धि, प्राणायाम अंगन्यास एवं पीठन्यास करे। ततः ऋष्यादिन्यासः ततो देहन्यासः यथा -

बृहदारण्यक ऋषये नमः शिरसि।

अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे।

बटुक भैरव देवतायै नमः हृदये।

हीं बीजाय नमः गुह्ये।

बं शक्तये नमः पादयोः।

ॐ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

देहन्यास -

मूर्ध्नि - ॐ भैरवाय नमः

ललाटे - ॐ भीमदर्शनाय नमः

नेत्रयो - ॐ भूताश्रयाय नमः

मुखे - ॐ तीक्ष्णदर्शनाय नमः

कर्णयो - ॐ क्षेत्रपाय नमः

हृदि - ॐ क्षेत्रपालाय नमः

नाभिदेशे - ॐ क्षेत्राख्याय नमः

कट्यां - ॐ सर्वाङ्घनाशनाय नमः

उर्वो - ॐ त्रिनेत्राय नमः

जंघयो - ॐ रक्तपाणिकाय नमः

पादयो - ॐ देव देवेशाय नमः

सर्वाङ्गे - ॐ बटुकाय नमः

कराङ्गन्यास -

ॐ हां बां अंगुष्ठाभ्यां नमः हृदयाय नमः

ॐ हीं बीं तर्जनीभ्यां नमः शिरसे स्वाहा

ॐ हूं बूं मध्यमाभ्यां नमः शिखायै वषट्

ॐ हैं बै अनामिकाभ्यां नमः कवचाय हुं

ॐ हौं बौ कनिष्ठिकाभ्यां नमः नेत्रत्रयाय वौषट्

ॐ हः बः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः अस्त्राय फट्

क्रियोड्डीश तन्त्रोक्त बटुक भैरव प्रयोगः

८१

ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा -

ध्यानम् -

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुण्डलोद्भासिवक्त्रं,  
 दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणी नूपुराढ्यैः।  
 दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं,  
 हस्ताब्जाभ्यां बटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम्॥

ध्यान कर बटुक के मूल मंत्र का ग्यारह हजार जप कर उसका दशांश अभिषेक तर्पण मार्जन हवन ब्राह्मणभोजन यथाविधि करे। यह प्रयोग सभी प्रकार के अरिष्ट का नाश कर शान्ति प्रदान करता है। वशीकरण कार्य के लिये पूर्ववत् संकल्प पूजन न्यासादि कर निम्न ध्यान करे।

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागश्रजम्,  
 स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।  
 नीलग्रीवमुदारभूषणयुतं शीतांषुचूडोज्ज्वलम्,  
 वन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये॥

अर्थ - भैरव के शरीर की प्रभा उदीयमान सूर्य के समान है। वे तीन नेत्रवाले, रक्तांगराग, रक्तमालाधारी तथा स्मितमुख हैं। उनके हाथों में वरमुद्रा, कपाल, अभयमुद्रा एवं शूल हैं। वे साधकों का भय हरने वाले हैं। उनकी ग्रीवा नीलवर्ण अनेक आभूषणों से सुशोभित है। उनके चूडा में चन्द्रमा है एवं वन्धूक पुष्प के समान लाल वस्त्र धारण किये हुये हैं।

इस प्रकार ध्यान कर ११ हजार जप कर अभिषेकादि करने से वशीकरण प्रयोग सिद्ध होता है।

स्तम्भन विद्वेषण उच्चाटन मारण आदि क्रूरकर्मों में यथा विधि संकल्प कर पूर्ववत् न्यासादि करें।

ध्यान -

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तिं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं।  
 दिग्बस्त्रं पिंगलाक्षं डमरुमथसृणिं खड्गशूलाभयानि॥  
 नागं घटां कपालं करसरसिरुहैर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रं।  
 सर्पाकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत्किङ्किणी नूपुराढ्यम्॥



भैरव के शरीर की कान्ति नीलपर्वत के समान है वे चन्द्रकला तथा मोतियों की माला को धारण किये हैं। दिगम्बर एवं पिंगलवर्ण नेत्रों वाले हैं उनके हाथों में डमरु अंकुश खड्ग शूल अभयमुद्रा सर्प घंटा तथा नर मुण्ड है। उनकी दन्तपङ्क्ति भयानक है वे तीन नेत्रोंवाले मणिमय किङ्किणी नूपुर आदि आभूषणों से अलंकृत हैं।

उक्त ध्यान कर मूलमंत्र का ग्यारह हजार जप कर अभिषेक तर्पणादि करने से विद्वेषणादि क्रूर कर्म सिद्ध होते हैं।

### सिद्ध भैरव

अस्य श्री सिद्ध भैरव मंत्रस्य शंकरऋषिः संस्कृति छन्दः सिद्ध भैरवो देवता भं वीजं श्री शक्तिः मोहने विनियोगः।

भामित्यादि षडङ्ग।

### ध्यानम्

जलद पटलनीलं दीप्यमानोग्रकेशं

त्रिशिख डमरुहस्तं चन्द्रमूलेखावतंसं।

विमल वृष निरुढं चित्रशार्दूलवासः

विजयमनिशमीडे विक्रमोदण्डचण्डम्॥

मन्त्र - ॐ नमो भगवते विजय भैरवाय प्रलयान्तकाय महाभैरव्यै महाभैरवाय सर्वविघ्ननिवारणाय शक्तिधराय चक्रपाणये वटमूलसन्निषण्णाय अखिलगणनायकाय आपदुद्धारणाय आकर्षय आकर्षय आवेशय आवेशय मोहय मोहय भ्रामय भ्रामय भाषय भाषय शीघ्रं भाषय हां ह्रीं त्रिपुरताण्डवाय अष्टभैरवाय भाषय भाषय स्वाहा।

यन्त्र - शान्तं त्रिमुखमालिख्य तेन सम्वेष्ट्य सर्वतः। अथ शूलं द्विपाश्वे च यन्त्रं विजयमद्भुतम्॥ एवं यन्त्रं लिखित्वा तु मन्त्रेणानेन मंत्रयत्। भस्म दर्शन मात्रेण क्षणादावेशमाप्नुयात्॥ त्रि बिन्दुनि उक्त षकारं विलिख्य अन्तिम बिन्दु रेखाग्रेण परितः संवेष्ट्य तस्य पार्श्वयोः शूलद्वयं विलिख्य तदयन्त्रं भस्मनि विलिख्य भैरव मन्त्रं जपित्वा भस्मं क्षिपेत्, आवेशो भवति। (शरभ तंत्रम्)

क्रियोद्दीश तन्त्रोक्त बटुक भैरव प्रयोगः

८३

## अथ तुम्बुरु भैरवमन्त्रः

अस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि देवानामपि दुर्लभम्।  
 यस्य विज्ञान मात्रेण जायन्ते सर्वसिद्धयः॥  
 आदौ तारं समुद्धृत्य ततः तुम्बुरु भैरवः।  
 पदं दत्त्वा शिवं बीजं अमुकस्यपदं वदेत्॥  
 सर्वशान्ति पदं दत्त्वा पदं देहं कुरुद्वयम्।  
 ईशानं वह्निमारुढं द्वितीयस्वर भूषितम्॥  
 नाद विन्दु समायुक्तं वह्निमायामनन्तरम्।  
 अनेन बलिमादधादन्नादिक समन्वितम्॥

अत्र मन्त्र —

ॐ तुम्बुरु भैरव! हौं अमुकस्य सर्वशान्ति कुरु हां रं हीं।

पूजयेत् श्वेतदूर्वाभिर्नानापुष्पैर्विशेषतः।

धूपदीपादिसंयुक्तैः सहस्रं प्रजपेन्मनुम्॥

यस्य नाम्ना भवेत् तस्य सर्वशान्तिरनुत्तमा।

साध्यमौली सुधाधारं तस्य मूर्ध्नि प्रवर्षिणम्॥

अहर्निशं स्मरेद्देवं शान्तिपुष्टिकरं शिवम्।

होमं वा कारयेदेभिर्दूर्वापुष्पाक्षतादिभिः॥

तिलजीरसमायुक्तैर्द्रव्यैश्च घृत संयुतैः।

त्रिकोणके ततः कुण्डे वह्निं प्रज्वालय होमयेत्॥

दशाङ्गकस्य होमेन ततः शान्तिर्भविदिति॥

(षट्कर्म दीपिका)

## स्वर्णाकर्षण भैरव

अस्य श्री स्वर्णाकर्षण भैरवमन्त्रस्य ब्रह्मात्रृषिः पंक्तिच्छन्दः स्वर्णाकर्षण  
 भैरवो देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास —

ॐ क्लां हां हृदयाय नमः, ॐ क्लीं हीं शिरसे स्वाहा,

ॐ क्लूं हूं शिखायै वषट्, ॐ क्लौं हूं कवचाय हुं,

ॐ क्लौं हौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ क्लः हः अस्त्राय फट्।



पारिजातद्रुमान्तारे स्थिते माणिक्यमण्डपे।  
 सिंहासनगत ध्यायेद् भैरवं स्वर्णदायिनम्॥  
 गाङ्गेयपात्रं डमरुं त्रिशूलं वरं करैः संदधतं त्रिनेत्रम्।  
 देव्यायुतं तप्तसुवर्णवर्णं स्वर्णाकर्षणं भैरवमाश्रयामः॥

पारिजात वृक्षों के वन में स्थित माणिक्य निर्मित में रत्नसिंहासन पर आसीन स्वर्ण देने वाले भगवान् भैरव का ध्यान करना चाहिये। अपने चारों हाथों में क्रमशः स्वर्णपात्र, डमरु, त्रिशूल एवं वरमुद्रा धारण करने वाले तीन नेत्र वाले तप्त सुवर्ण जैसी आभा वाले एवं देवी के साथ विराजमान स्वर्णाकर्षण भैरव का आश्रय लेते हैं।

इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिये एवं दशांश खीर का हवन करना चाहिये तथा विद्वान साधक को शैवपीठ पर अंगपूजा दिक्पाल एवं उनके आयुधों के साथ आवरण पूजन करना चाहिये।

**पूजन यंत्र** - षट्कोण कर्णिका तथा भूपुर सहित बने यंत्र पर स्वर्णाकर्षण भैरव का पूजन करना चाहिये।

**पीठपूजा विधि** - सर्व प्रथम स्वर्णाकर्षण भैरव का ध्यान कर मानसोपचार पूजन कर विधिवत् अर्घ्य स्थापन कर पीठ पूजा करे। यथा -  
**पीठमध्ये** -

ॐ आधार शक्तये नमः,      ॐ प्रकृतये नमः,  
 ॐ कूर्माय नमः,      ॐ अनन्ताय नमः,  
 ॐ पृथिव्यै नमः,      ॐ क्षीरसमुद्राय नमः,  
 ॐ श्वेत द्वीपाय नमः,      ॐ मणिमण्डपाय नमः,  
 ॐ कल्पवृक्षाय नमः।

**ततो कर्णिका मूले** - ॐ मणिवेदिकायै नमः।

**कर्णिकोपरि** - ॐ रत्न सिंहासनाय नमः।

**चतुर्दिक्षु** -

ॐ धर्माय नमः,      ॐ ज्ञानाय नमः,      ॐ वैराज्ञाय नमः,  
 ॐ ऐश्वर्याय नमः,      ॐ अधर्माय नमः,      ॐ अज्ञानाय नमः,  
 ॐ अवैराज्ञाय नमः,      ॐ अनैश्वर्याय नमः।

पुनः पीठमध्ये -

ॐ अनन्ताय नमः, ॐ पद्माय नमः, ॐ अं द्वादश कलात्मने  
सूर्यमण्डलाय नमः, ॐ उं षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः, ॐ रं दश  
कलात्मने अग्नि मण्डलाय नमः, ॐ सं सत्वाय नमः, ॐ रं रजसे नमः,  
ॐ तं तमसे नमः, ॐ आं आत्मने नमः, ॐ पं परमात्मने नमः, ॐ ह्रीं  
ज्ञानात्मने नमः।

इसके बाद मध्य में -

ॐ वामायै नमः, ॐ ज्येष्ठायै नमः, ॐ रौद्रायै नमः, ॐ काल्यै नमः,  
ॐ कल विकरण्यै नमः, ॐ बल विकरण्यै नमः, ॐ बल प्रमथन्यै नमः,  
ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः, ॐ मनोन्मन्यै नमः।

फिर - ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मक शक्तियुक्ताय  
अनन्तयोगपीठात्मने नमः' इस मंत्र से आसन देकर मूल मंत्र से मूर्ति की कल्पना  
कर आवाहनादि उपचारों से पूजन करे अनन्तर पुष्पाञ्जलि प्रदानकर आवरण  
पूजन करे।

आवरण पूजा विधि -

सर्वप्रथम कर्णिका में - ॐ क्लां हां हृदयाय नमः, ॐ क्लीं ह्रीं शिरसे  
स्वाहा, ॐ क्लूं हूं शिखायै वषट्, ॐ क्लैं हैं कवचय हुं, ॐ क्लौं हौं नेत्रत्रयाय  
वौषट्, ॐ क्लः हः अस्त्राय फट्। तत्पश्चात् भूपुर में पूर्वादि क्रम से -

ॐ लं इन्द्राय नमः, ॐ रं अग्नये नमः, ॐ मं यमाय नमः, ॐ क्षं  
निर्ऋतये नमः, ॐ वं वरुणाय नमः, ॐ यं वायव्ये नमः, ॐ सं सोमाय नमः,  
ॐ हं ईशानाय नमः, ॐ आं ब्रह्मणे नमः, ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः।

फिर भूपुर के बाहर पूर्वादि क्रम से -

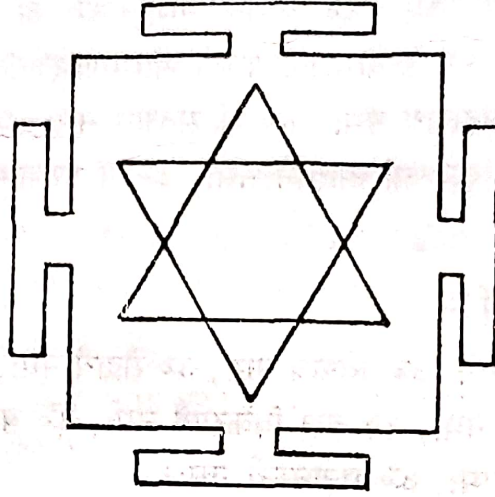
ॐ वं वज्राय नमः, ॐ शं शक्तये नमः, ॐ दं दण्डाय नमः,  
ॐ खं खड्गाय नमः, ॐ पां पाशाय नमः, ॐ अं अंकुशाय नमः, ॐ गं  
गदायै नमः, ॐ शूं शूलाय नमः, ॐ चं चक्राय नमः, ॐ पं पद्माय नमः।

इस प्रकार आवरण पूजन कर पंचोपचारों से विधिवत् पूजन करना चाहिये।

इस विधि से सिद्ध मन्त्र का जो व्यक्ति ४९ दिन तक प्रतिदिन ३०० मन्त्र  
जप करता है उसकी दरिद्रता दूर होकर वैभवशाली हो जाता है घर में सोने  
की वृद्धि हो जाती है।



## स्वर्णाकर्षण भैरवपूजन यन्त्र



मन्त्र - 'ॐ ऐं क्लां क्लीं क्लूं हां ह्रीं हूं सः वं आपदुद्धारणाय  
अजामलबद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षण भैरवाय मम दारिद्र्य विद्वेषणाय  
ॐ श्रीं महाभैरवाय नमः॥' (मन्त्र महोदधि)

## अन्य प्रकार -

ॐ अस्य श्री स्वर्णाकर्षण भैरव मंत्रस्य ईश्वरऋषिः गायत्री छंदः  
स्वर्णाकर्षण भैरवो देवता श्रीं वीजं ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकम् मम श्री स्वर्णाकर्षण  
भैरव प्रसाद सिद्धि द्वारा चिन्तिताभीष्ट फलावाप्ति साधने विनियोगः।

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ॐ नमो भगवते अंगुष्ठाभ्यां नमः हृदयाय नमः  
स्वर्णाकर्षण भैरवाय तर्जनीभ्यां नमः शिरसे स्वाहा  
प्रणताभीष्ट पूरणाय मध्यमाभ्यां नमः शिखायै वषट्  
ऐहोहि करुणानिधे अनामिकाभ्यां नमः कवचाय हुं  
मह्यं हिरण्यं दापय दापय कनिष्ठिकाभ्यां नमः नेत्रत्रयाय वौषट्  
शीघ्रं दापय दापय श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा।

करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः अस्त्राय फट्

## भूर्भुवः स्वरोमिति दिग्बन्धः

स्वर्णप्रदानाध्वर दीक्षिताय, स्वतेजसाक्रान्त जगत्रयाय।

सौभाग्य सम्पत्सहिताय नित्यं, श्रीं श्रीं महाभैरव ते नमोऽस्तु॥

मन्त्र - "ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ॐ नमो भगवते स्वर्णाकर्षण भैरवाय भक्ताभीष्ट  
पूरणाय ऐहोहि करुणानिधे मह्यं हिरण्यं दापय दापय शीघ्रं दापय-दापय श्रीं ह्रीं  
क्लीं स्वाहा॥"

यंत्रः

|    |    |    |
|----|----|----|
| ८८ | ११ | ६६ |
| ३३ | ५५ | ७७ |
| ४४ | ९९ | २२ |

मन्त्रशास्त्रोक्त प्रकार -

अस्य श्री स्वर्णाकर्षण भैरव महामन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः पंक्तिः छन्दः  
स्वर्णाकर्षण भैरवः परमात्मा देवता ऐं बीजं नमः गुह्ये क्लीं शंभवे नमः पादयोः  
ह्रीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे मम दारिद्र्य विद्वेषनार्थे जपे विनियोगः।

ॐ क्लीं ह्रीं इति षडंग -

ध्यानम्

पीयूष भाण्ड मसिदण्ड कपाल खण्डं,  
चण्डातिचण्ड भुजदण्डमति प्रचण्डं।  
श्री कुण्डल त्रितय मण्डल शोभि गण्डं,  
ध्याये बटुं बटुकनाथमभीष्ट सिद्धये॥

मंत्र - ॐ ऐं क्लीं क्लीं क्लीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं सर्व आपदुद्धारणाय  
अजामलबद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षण भैरवाय मम दारिद्र्य विद्वेषणाय ॐ  
श्रीं महाभैरवाय नमः॥

पूजन यंत्रः

|    |    |    |
|----|----|----|
| ८८ | ११ | ६६ |
| ३३ | ५५ | ७७ |
| ४४ | ९९ | २२ |

प्रथम नित्य गंध पुष्प धूप दीप नैवेद्य से यंत्र का पूजन कर पश्चात् मंत्र  
का जप करना चाहिये।

रुद्रयामलोक्त बटुक भैरव मंत्र प्रकारः

ॐ 'क्लीं वीं रुं धूं घ्नीं ह्रीं वटुक भैरवाय नमः स्वाहा।' (देवीरहस्य)



## श्री बटुक शताक्षरी माला मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरुकुरु बटुकाय ह्रीं द्रां द्रीं क्रीं  
 ल्वं सः हौं हौं हां ह्रीं ह्रूं भ्रां भ्रीं भ्रूं वं श ल व र यूं महाकालाय महाभैरवाय  
 मां रक्ष रक्ष मम पुत्रान् रक्ष रक्ष मम भ्रातरं रक्ष रक्ष मम शिष्यान् रक्ष रक्ष साधवान्  
 रक्ष रक्ष मम सपरिवारं रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टदृष्टि दुष्टबुद्धि प्रयोगान् कुर्वन्ति  
 कारयन्ति करिष्यन्ति तान हन हन पापं मथ आरोग्यं कुरु पर बलानि ओभय  
 ओभय क्षौं क्षौं क्षौं ह्रीं बटुकाय कलिरुद्राय नमः।

इति बटुक शताक्षरी मालामंत्रः॥

## बटुक मंत्र प्रकार -

ह्रीं बटुकाय क्षौं क्षौं आपदुद्धारणाय सर्वाबाधा विनिर्मुक्तं धनधान्य  
 समन्वितं च मां कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं नमः॥

## बटुक भैरव मंत्र

ॐ अस्य श्री बटुक भैरव मंत्रस्य स्कंद ऋषिः अनुष्टुप छन्दः श्री बटुक  
 भैरव देवता बं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रौं कीलकं ममाभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

स्कंद ऋषये नमः शिरसि

अनुष्टुप छन्दसे नमः मुखे

बटुक भैरव देवतायै नमः हृदये

बं बीजाय नमः गुह्ये

ह्रीं शक्तये नमः पादयोः

क्रौं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

ॐ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः

ह्रीं हृदयाय नमः

बटुकाय तर्जनीभ्यां नमः

बटुकाय शिरसे स्वाहा

आपदुद्धारणाय मध्यमाभ्यां नमः

आपदुद्धारणाय शिखायै वषट्

कुरु कुरु अनामिकाभ्यां नमः

कुरु कुरु कवचाय हुं

बटुकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः

बटुकाय नेत्रत्रयाय वौषट्

ह्रीं ॐ स्वाहा करतल कर. नमः

ह्रीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्।

फणि डमरुकं पश्चादङ्कुशं पाशमेव च।

अमृतकलशं चैव वरदाभय धारिणम्॥

कालाम्बुदश्यामलाङ्गं वन्दे बटुक भैरवम्॥

मानसोपचारैः सम्पूज्य।

मंत्र - ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ स्वाहा॥

मुद्रा - फणि, डमरु, अङ्कुश, पाश, अमृतकलश, वर, अभय।

॥ इति क्रियोद्दीश तन्त्रोक्त बटुक भैरव प्रयोगः॥

## बटुक शाप विमोचन

मन्त्र - "ॐ ह्रीं बटुक! शापं विमोचय विमोचय ह्रीं क्लीं।"

### शापोद्धार बटुक स्तवः

ॐ वृन्दारकप्रकर वन्दित पादपद्म,  
चञ्चलभापटल निर्जित नीलपद्मम्।  
सर्वार्थ साधकमगाध दयासमुद्रं,  
वन्दे विभुं बटुकनाथमनाथबन्धुम्॥  
मुण्डमालाधरं शान्तं, कुण्डलप्रभयान्वितम्।  
भुजंग मेखलं दिव्यं, बटुकाख्यं नमाम्यहम्॥  
चतर्बाहुं कलामूर्ति, युगान्तदहनोपमम्।  
सर्वार्थ साधकं देवं, भैरवं प्रणमाम्यहम्॥  
ज्वलदग्नि प्रतीकाशं खट्वाङ्गवरधारकम्।  
स्वर्गणैः सर्वतो व्याप्तं भैरवं प्रणमाम्यहम्॥  
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च मरीच्याद्या महर्षयः।  
बटुकं प्रणमन्ते तं सदा सम्पन्न मानसम्॥  
पञ्चवक्त्रं कृपासिन्धुं नानाभरणभूषितम्।  
धर्मार्थकाममोक्षाणां दातारं प्रणमाम्यहम्॥  
विद्यावन्तं दयावन्तं शङ्करप्रियबान्धवम्।  
उत्पत्तिरिथिति संहारं भैरवं प्रणमाम्यहम्॥  
य इदं पठते नित्यं बटुकस्तव पूर्वकम्।  
सर्वाबाधा विनिर्मुक्तः स सर्वेप्सितभाग् भवेत्॥

इति बटुकस्तवः सम्पूर्णम्॥



## बटुक हृदयम्

कैलाश शिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम्।  
देवी प्रप्रच्छ सर्वज्ञं शंकरं वरदं शिवम्॥

## श्री देव्युवाच

देवदेव परेशान भक्ताभीष्ट प्रदायक।  
प्रब्रूहि मे महाभाग गोप्यं यद्यपि न प्रभो॥  
बटुकस्यैव हृदयं साधकानां हिताय च॥

## श्री शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि हृदयं बटुकस्य च॥  
गुह्याद्गुह्यतरं गुह्यं तच्छृणुष्व तु मध्यमे।  
हृदयस्यास्य महादेवि बृहदारण्यको ऋषिः॥  
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातो देवता बटुकः स्मृतः।  
प्रयोगाऽभीष्ट सिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः॥  
ॐ प्रणवेशः शिरः पातु ललाटे प्रमथाधिपः।  
कपोलौ कामवपुषो भ्रूमध्ये भैरवेश्वरः॥  
नेत्रयीर्वह्निनयनो नासिकायामघापहः।  
ऊर्ध्वोष्ठे दीर्घनयनो ह्यधरोष्ठे भयाशनः॥  
चिबुके भालनयनो गण्डयोश्चण्डशेखरः।  
मुखान्तरे महाकालो भीमाक्षो मुखमण्डले॥  
ग्रीवायां वीरभद्रोऽव्याद् घण्टिकायां महोदरः।  
नीलकण्ठो गण्डदेशे जिह्वायां फणिभूषणः॥  
दशने वज्रदशनो तालुके ह्यमृतेश्वरः।  
दोर्दण्डे वज्रदण्डो मे स्कन्धयोः स्कन्धवल्लभः॥  
कूपरे कञ्जनयनो फणौ फेत्कारिणीपतिः।  
अङ्गुलीषु महाभीमो नखेषु अघहाऽवतु॥  
कक्षे व्याघ्रासनः पातु कट्यां मातङ्गचर्मणी।  
कुक्षौ कामेश्वरः पातु वस्तिदेशे स्मरान्तकः॥

शूलपाणिर्लिङ्गदेशे गुह्यं गुह्येश्वरोऽवतु।  
 जङ्घायां वज्रदमनो जघने जृम्भकेश्वरः॥  
 पादौ ज्ञानप्रदः पातु धनदश्चाङ्गुलीषु च।  
 दिग्वासी रोमकूपेषु सन्धिदेशे सदाशिवः॥  
 पूर्वाशां कामपीठस्थ उड्डीशस्थोऽग्निकोणके।  
 याभ्यां जालन्धरस्थो मे नैऋत्यां कोटिपीठगः॥  
 वारुण्यां वज्रपीठस्थो वायव्यां कुलपीठगः।  
 उदीच्यां वाणपीठस्थ ऐशान्यामिन्दुपीठगः॥  
 ऊर्ध्वं वीजेन्द्रपीठस्थः खेटस्थो भूतलोऽवतु।  
 रुरुः शयनेऽवतु मां चण्डोवादे सदावतु॥  
 गमने तीव्रनयने आसीने भूतवल्लभः।  
 युद्धकाले महाभीमो भयकाले भयान्तकः॥  
 रक्षरक्ष परेशान भीमदंष्ट्र भयापह।  
 महाकाल महाकाल! रक्ष मां कालसङ्कटात्।  
 इतीदं हृदयं दिव्यं सर्वपाप प्रणासनम्।  
 सर्व संपत्प्रदं भद्रे सर्वसिद्धि फलप्रदम्॥

॥ इति बटुक शाप विमोचन॥



## अपराध क्षमापन स्तोत्रम्

गुरोः सेवां त्यक्त्वा गुरुवचनशक्तोपि न भवे,

भवत्पूजाध्यानाज्जपहवन यागादिरहितः।

त्वदर्चानिर्माणे क्वचिदपि न यत्नं च कृतवा -

अगज्जालग्रस्तो झटिति कुरु हार्दं मयि विभो॥

प्रभो दुर्गासूनो तव शरणां सोधिगतवान्,

कृपालो दुःखार्तः किमपि भवदन्यं प्रकथये।

सुहृत्सम्पत्तेहं सरलविरलः साधकजन -

स्त्वदन्यः कस्मात्ता भवदहनदाहं शमयति॥

वदान्यो मानस्त्वं विविधजनपालो भवसि वै,

दयालुर्दीनार्तान्भवजलाधि पारं गमयसि।

अतस्त्वत्तो याचे नतिनियमतोऽकिञ्चनधनः,

सदा भूयाद्भावः पदनलिनयोस्ते तिमिरहा॥

अजापूर्वो विप्रो मिलपदपरो योतिपतितो,

महामूर्खोदुष्टां वृजिननिरतः पामरनृपः।

असत्पानासक्तो यवनयुवतीव्रातरमणः,

प्रभावात्त्वन्नाम्नः परमपदवीं सोप्यधिगतः॥

दयां दीर्घां दीने बटुक कुरु विश्वम्भर मयि,

न चान्यस्सन्नाता परमशिव मां पालयविभो।

महश्चर्यं प्राप्तस्तव सरलदृष्ट्या विरहितः,

कृपापूर्णेनेत्रैः कमलदलनिभैर्मां खचयतात्॥

सहस्ये किं हंसो नहि तपति दीनं जनचयं

घनान्ते किं चन्द्रोऽसमकरनिपातो भुवितले।

कृपादृष्टेस्तेऽहं भयहर विभो किं विरहितो

जले वा हर्म्ये वा वनरसमुयातो न विषमः॥

त्रिमूर्तिस्त्वं गीतो हरिहर विधातात्मकगुणो  
 निराकारः शुद्धः परतरपरः सौख्यविषयः।  
 दयारूपं शान्तं मुनिगमनुतं भक्तदयितं  
 कदा पश्यामि त्वां कुटिलकचशोभि त्रिनयनम्॥

तपो योगं साङ्ख्यं यमनियमं चेतः प्रियजनं  
 न कौलाचार्यचक्रं हरिहरविधीनां प्रयतमम्।  
 न जाने ते भक्तिं परममुनिमार्गं मधुविधिं  
 तथाप्येषा वाणी परिरटति नित्यं तव यशः॥

न मे काङ्क्षा धर्मं न वसुनिचये राज्यनिवहे,  
 न मे स्त्रीणां भोगे सखि सुत कुटुम्बेषु न च मे।  
 यदा यद्यद्भाव्यं भवतु भगवन् पूर्वसुकृतान्,  
 ममैतत्तु प्रार्थ्यं तव विमलभक्तिः प्रभवतात्॥

क्रियांस्तेऽस्मद्भारः पतितपतितांस्तारयसि भो,  
 मदन्यः कः पापी यजनविमुखः पाठरहितः।  
 दृढो मे विश्वासस्तव नियतिरुद्धार विषया  
 सदा स्याद्विश्रम्भः क्वचिदपि मृषा मा च भवतात्॥

भवद् भावाद् भिन्नो व्यसननिरतः को मदपरो,  
 मदान्धः पापात्मा बटुक शिव ते नामरहितः।  
 उदारात्मन्वन्धो नहि तवकतुल्यः कलुषहा,  
 पुनस्सञ्चिन्त्यैवं कुरु हृदि यथा चेच्छसि तथा॥

जपान्ते स्नानान्ते ह्युषसि च निशीथे पठति यो,  
 महासौख्यं देवो वितरति नु तस्मै प्रमुदितः।  
 अहोरात्रं पार्श्वे परिवसति भक्तानुगमनो,  
 वयोन्ते संहृष्टः परिनयति भक्तान् स्वभुवनम्॥

॥ इति श्री सिद्ध योगीश्वर श्री धनैय्यालाल शिष्येणात्मारामेण विरचितं  
 श्री बटुक प्रार्थना अपराधक्षमापन स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥